Postal Reg. No. M.P./Bhopal/4-340/2014-16
R.N.I.No. 51966/1989,ISSN 2455-2399
Date of Publication 15th February 2016
Date of posting 15th & 20th February 2016

फरवरी 2016 • वर्ष 27 • अंक 02 • मूल्य ₹ 30

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

विज्ञान पर्व एवं अनुसृजन विशेषांक

RNI No. 51966/1989
ISSN 2455-2399
www.electroniki.com
फरवरी 2016
वर्ष 27
अंक 2

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

सलाहकार मण्डल
शरद चंद्र बेहार, डॉ. वि.दि. गर्दे, डॉ. संध्या चतुर्वेदी
डॉ. मनमोहन बाला, डॉ. ए.एस.झाड़गांवकर, प्रो. व्ही.के.वर्मा

संपादक
संतोष चौबे

कार्यकारी संपादक
विनीता चौबे

उप–संपादक
पुष्पा असिवाल
सह–संपादक
मनीष श्रीवास्तव, मोहन सगोरिया, रवीन्द्र जैन

संस्थागत सहयोग
अमिताभ सक्सेना, शैलेष पांडेय, डॉ. राघव, डॉ. विजय सिंह,
डॉ. अनुराग सीठा, डॉ. सत्येन्द्र खरे, संतोष शुक्ला
राज्य प्रसार समन्वयक
शशिकांत वर्मा, लातूर सिंह वर्मा, केशव सहाय, लियाक़त अली खोखर,
राजेश शुक्ला, दर्शन व्यास, शलभ नेपालिया, अंबरीष कुमार,
हरीश कुमार पहारे, शैलेन्द्र मिश्रा
क्षेत्रीय प्रसार समन्वयक
निशांत श्रीवास्तव, राजीव चौबे, जितेन्द्र पांडे, लुकमान मसूद,
आर.के. भारद्वाज, संजीव गुप्ता, रवि चतुर्वेदी, प्रवीण तिवारी,
अरुण साहू, अभिषेक अवस्थी, विजय श्रीवास्तव, के.आई. जावेद,
असीम सरकार, अमृतेष कुमार, योगेश मिश्रा, संदीप वशिष्ठ,
संतोष कुमार पाढ़ी, दर्शन व्यास, मनीष खरे, आबिद हुसैन भट्ट, दलजीत सिंह,
राजन सोनी, अजीत चतुर्वेदी, अनिल कुमार, अमिताभ गांगुली,
कुम्भलाल यादव, राजेश बोस, देबदत्ता बॅनर्जी, नरेन्द्र कुमार

समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन
राजेश पंडा
आवरण एवं डिजाइन
वंदना श्रीवास्तव, अमित सोनी, मुकेश सेन

विज्ञान संस्कृति का एक हिस्सा है। संस्कृति केवल कला एवं संगीत और साहित्य ही नहीं है, बल्कि यह तो एक समझ है कि आखिरकार यह संसार किस चीज से बना और यह कार्य कैसे करता है

– मैक्स ऍफ पैरुट्ज

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए - 259

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

अनुक्रम

संपादकीय

विज्ञान का प्रचार-प्रसार हमारा मुख्य ध्येय ● संतोष चौबे /05

व्याख्यान

विज्ञान का मूल चरित्र प्रवाह है● डॉ. आर. गोपीचंद्रन/06

विज्ञान, साहित्य और जीवन● देवेन्द्र मेवाड़ी/07

विज्ञान

वैज्ञानिक सोच पूर्वाग्रह से मुक्त है ● विश्वमोहन तिवारी /12

हिन्दी विज्ञान लेखन परिवर्तनकारी है ● शिवगोपाल मिश्र /14

सूर्य कोण से पक्षी का उड़ान निर्धारण ● डॉ. स्वाति तिवारी /16

पादप संरचना में कोशिकाओं की भूमिका ●प्रेमचंद्र श्रीवास्तव /18

भाषा की समृद्धि है वैज्ञानिकता ● महेन्द्र कुमार माथुर /19

बायोइन्फार्मेटिक्स का इतिहास ● डॉ.अर्चना पाण्डेय /20

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव ● डॉ.दिनेश मणि /21

ब्लैक होल का विश्लेषण रहस्यमयी ● प्रदीप कुमार श्रीवास्तव /22

स्वास्थ्य का त्रिभुज ● मनीष मोहन गोरे/24

पृथ्वी पर एक ही महासागर था ● बजरंग लाल जेठू/26

प्राकृतिक संसाधनों का दोहन खतरनाक● डॉ. सुमन गुप्ता /27

प्राचीन सभ्यताओं में सौन्दर्य-इतिहास ● डॉ. बबीता अग्रवाल /28

धूमकेतु सौर मंडल के जलवाहक ● नवनीत कुमार गुप्ता /30

परिस्थितिक तंत्र पर निर्भरता ● राजेन्द्र शर्मा 'अक्षर' /32

प्रदूषण जनित रोग ● डॉ.सुनन्दा दास /34

जन्तुओं में भी है गणन क्षमता ● डॉ.राजेन्द्र प्रसाद मिश्र /36

शरीर में सूक्ष्म जीवों की उपस्थिति ● डॉ. पंकज श्रीवास्तव /38

जीव पर्यावरण पर नियंत्रण रखते हैं ● तोषी जैन /39

विज्ञान संचार : विचार संपदा का विस्तार ● चक्रेश जैन /40

हमारे प्रेरणा स्रोत : भारतीय वैज्ञानिक ● राम शरण दास /41

तकनीक

लिनक्स : एक आधुनिक सिस्टम ● रविशंकर श्रीवास्तव /43

विज्ञान संवाद

बिन बिजली सब सून ● डॉ.जाकिर अली 'रजनीश'/45

औषधियों का संश्लेषण ● डॉ.पुरुषोत्तम चक्रवर्ती/47

ग्रीन बेबी ● विजय चितौरी/49

रसोई विज्ञान ● पुनीता मल्होत्रा /51

विज्ञान प्रयोग

बच्चों के लिये विज्ञान मॉडल ● बृजेश दीक्षित/52

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

सेक्ट, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, भोपाल–47

फोन : 0755-6766165 (डेस्क), 6766101, 6766101 (रिसेप्शन), फैक्स : 0755-6766110

e-mail :electroniki@electroniki.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 330/- प्रति अंक : 30/-

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है।

सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।

स्वामी, संतोष कुमार चौबे, प्रकाशक व मुद्रक संतोष चौबे के लिए पहले पहल प्रिंटरी, 25 ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित, संपादक संतोष चौबे

विज्ञान का प्रचार-प्रसार हमारा मुख्य ध्येय

सं
पा
द
की
य

विज्ञान एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रचार-प्रसार का दायित्व देश की अग्रणी संस्था आईसेक्ट की नीतियों में शामिल रहा है। इसी को दृष्टि में रखते हुए अनुसृजन परियोजना की परिकल्पना की गई जिसका उद्‌देश्य वैज्ञानिक विषयों पर नवीन सामग्री का सृजन करना है। इस परियोजना के क्रियान्वयन के लिए मध्य प्रदेश विज्ञान एवं प्रौद्योगकी परिषद द्वारा देश की जानी मानी संस्था 'आईसेक्ट' का चयन किया गया। अनुसृजन परियोजना के अन्तर्गत प्रथम चरण में तेरह और द्वितीय चरण में छः पुस्तकों का प्रकाशन किया गया।

इसी नवोन्मेष को आगे बढ़ाते हुए अनुसृजन परियोजना के तृतीय चरण में आईसेक्ट विश्वविद्यालय द्वारा छब्बीस पुस्तकों का प्रकाशन किया गया है। उल्लेखनीय है कि आईसेक्ट विश्वविद्यालय अपने साथ देश के प्रमुख विज्ञान लेखकों को एक सूत्र में एक मंच पर जोड़ सका और इन सम्माननीय विज्ञान लेखकों के माध्यम से, विज्ञान सामग्री से परिपूर्ण, रोचक, पठनीय पुस्तकें तैयार करने में सफल हो सका।

अनुसृजन परियोजना के तृतीय चरण में आधुनिक एवं प्राचीन स्रोतों के आधार पर नई सामग्री तैयार करने का चुनौतीपूर्ण परंतु आनंददायक कार्य संपन्न हुआ। हिंदी में विज्ञान और नवीन तकनीक पर आधारित रोचक पाठ्य सामग्री तैयार करना आईसेक्ट विश्वविद्यालय का एक महत्वपूर्ण उद्‌देश्य रहा है जिसे हमने अपने दीर्घ अनुभव के आधार पर संपादित किया है।

विषयों के चयन में इस बात का ध्यान रखा गया है कि आधुनिक और प्राचीन दोनों ही तरह की विषय वस्तुओं का उपयोग किया जाए और साथ ही कुछ ऐसे विषयों को भी लिया जाए जिससे समाज के सामने आ रही समस्याएं परिलक्षित हों और उनके बारे में हमारी सामग्री पाठक को जागरूक करने का कार्य कर सके। अनुसृजन की इस श्रृंखला में एक ओर 'ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति', 'भारत में विज्ञाान एवं विज्ञान संचार की परंपरा', 'हिंदी विज्ञान लेखन : भूत, वर्तमान एवं भविष्य', 'भारतीय वैज्ञाानिकों के अनछुए पहलू', 'हम क्या समझते हैं', 'मध्यप्रदेश की विज्ञान संचार यात्रा' जैसे विषय लिए गए हैं तो पर्यावरण की महत्ता की दृष्टि से 'जलवायु परिवर्तन', 'महासागर बोलते हैं', 'महासागर : जीवन के आधार', 'भोज वेटलैंड-भोपाल ताल', 'पर्यावरण और मानव जीवन' जैसे विषयों पर भी पुस्तकें शामिल की गई हैं। जन सामान्य की रुचि के अनुसार विज्ञान कथा एवं उपन्यास पर आधारित 'ह्यूमन

ट्रांसमिशन एवं अन्य विज्ञान कथाएं', 'ग्रीन बेबी' के अलावा 'रसोई विज्ञान', 'फोरेंसिक विज्ञान', 'दैनिक जीवन में रसायन', 'सेहत और हम', 'प्रदूषण जनित रोग', 'सौंदर्य प्रसाधन का रसायन विज्ञान', 'भोपाल के पक्षी', 'सर्वशास्त्र शिरोमणि गणित' जैसे विषयों का समावेश किया है। विद्यार्थियों के लिए विशेष उपयोगी 'आइए लिनक्स सीखें', 'सूक्ष्मजीव विज्ञान', 'बायोइन्फोर्मेटिक्स', 'ऊतक संवर्धन', 'बच्चों के लिए विज्ञान मॉडल' भी इस श्रृंखला में शामिल किए गए हैं। भाषा को सहज एवं संप्रेषणीय रखने का प्रयास किया गया है और उसे बोझिल होने से बचाया गया है।

प्रसन्नता की बात है कि हमें अपनी इस परियोजना में देश के प्रमुख विज्ञान लेखकों का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ। मैं विश्व मोहन तिवारी, डॉ. शिव गोपाल मिश्र, महेंद्र कुमार माथुर, राजेंद्र शर्मा 'अक्षर', डॉ. स्वाति तिवारी, रविशंकर श्रीवास्तव, मनीष मोहन गोरे, डॉ. दिनेश मणि, बजरंग लाल जेठू, नवनीत गुप्ता, डॉ. पंकज श्रीवास्तव, तोषी जैन, पुनीता मलहोत्रा, डॉ.जाकिर अली 'रजनीश', डॉ.अर्चना पांडे, राम शरण दास, चक्रेश जैन, डॉ.पुरुषोत्तम चक्रवर्ती, विजय चितौरी, डॉ.राजेन्द्र प्रसाद मिश्र, प्रेमचंद्र श्रीवास्तव, प्रदीप श्रीवास्तव, डॉ. बबीता अग्रवाल, डॉ. सुनंदा दास, डॉ. सुमन गुप्ता एवं बृजेश दीक्षित का बहुत आभारी हूँ जिन्होंने बड़े मनोयोग से कार्य पूर्ण किया।

वस्तुतः विज्ञान का प्रसार ही हमारा प्रमुख कार्य रहा है। हमने आरंभ में विज्ञान तकनीक और पर्यावरण संबंधी नुक्कड़ नाटक, कार्यशालाएं आदि पर जोर दिया। आईसेक्ट स्टूडियो ने विज्ञान नाटक, विज्ञान गीत रेडियो धारावाहिक का निर्माण कर विज्ञान के क्षेत्र में बड़ा काम किया है। आप आकाशवाणी भोपाल और रेडियो रमन बिलासपुर पर इन कार्यक्रमों को सुन सकते हैं। हमारा निरंतर प्रयास रहता है कि हम विज्ञान के क्षेत्र में नवोन्मेष कर सकें।

अनुसृजन परियोजना के अंतर्गत प्रकाशित होने वाली पुस्तकों पर पिछली दो श्रृंखलाओं में मध्यप्रदेश विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद का सहयोग प्राप्त हुआ। इस तीसरी श्रृंखला को पूर्णतः आईसेक्ट द्वारा संपादित किया गया है। अब तक हम 45 किताबें संपादित और प्रकाशित कर चुके हैं। मेरा विश्वास है अगली कड़ी में हम 100 का आंकड़ा प्राप्त कर लेंगे।

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' का यह अंक हमने इसी अनुसृजन प्रकाशन योजना पर केन्द्रित किया है। आशा है आप सब को यह अंक अच्छा लगेगा।

संतोष चौबे

व्याख्यान

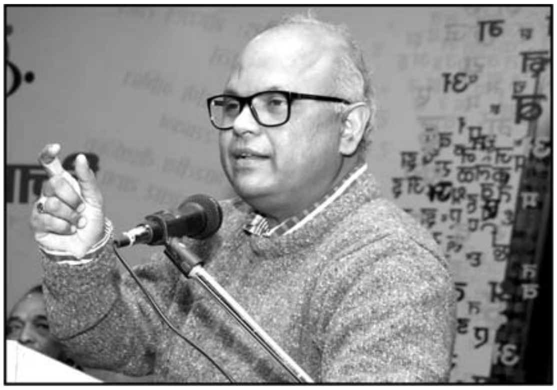

विज्ञान का मूल चरित्र प्रवाह है

डॉ.आर.गोपीचंद्रन

अनुसृजन परियोजना के तहत प्रकाशित पुस्तक विमोचन एवं सम्मान समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में पधारे डॉ.आर. गोपीचंद्रन ने सूत्रों के रूप में अपनी बात कही। उन्होंने कहा कि विज्ञान के प्रभावी संचार के लिए निम्नलिखित तीन स्तरीय प्रक्रिया को अपनाया जाना चाहिए :

एक- दोहराव को छोड़कर नए विचार बिंदुओं पर कार्य।

दो- विज्ञान संचारकों का क्षमता निर्माण

तीन- प्रशिक्षित संचारकों को आवश्यकता आधारित कार्य क्षेत्रों में समावेश।

विशेषज्ञता वास्तव में सटीकता (शुद्धता) और गति जैसे दो अहम तत्वों से मिलकर बनती है। उस व्यक्ति को विशेषज्ञ नहीं कहेंगे जो सटीक बात न करे और जिसमें गतिशीलता न हो।

विज्ञान मानवीय मूल्यों पर आधारित होता है। विज्ञान और मूल्य (चरित्र) समाज में एक साथ प्रवाहित होने चाहिए। अगर वैज्ञानिक शोध मानवीय मूल्यों का सम्मान नहीं करे तो वह शोध मानवता के किसी काम नहीं आ सकता है।

गाँधी जी ने कहा था कि एक व्यक्ति जो कार्य अकेले में करता है, वह उसका वास्तविक चरित्र होता है। यह सन्देश समूची मानव जाति के लिए प्रेरणादायी है। इसे हमें अपने जीवन में अवश्य उतारना चाहिए।

विज्ञान के नाम पर संप्रेषित की जा रही विषय-वस्तु उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी कि संचारक की विश्वसनीयता।

विज्ञान, साहित्य और जीवन

19 दिसम्बर 2015 को संपन्न हुये साहित्य पर्व में 'अनुसृजन' शृंखला के तहत 26 विज्ञान पुस्तकों का विमोचन हुआ। विज्ञान पर्व में वरिष्ठ विज्ञान लेखक देवेन्द्र मेवाड़ी ने 'विज्ञान, साहित्य और जीवन' विषय पर व्याख्यान दिया जिसे यहाँ अविकल प्रस्तुत किया जा रहा है।
देवेन्द्र मेवाड़ी पूर्व में भी 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में छप चुके हैं। उनका मनीष मोहन गोरे द्वारा लिया गया साक्षात्कार भी हमने पूर्व में प्रकाशित किया था जिसमें विज्ञान लेखन के विविध पक्षों के समस्याओं पर विस्तार से चर्चा थी। इस साक्षात्कार पर हमें व्यापक रूप से प्रतिक्रिया भी प्राप्त हुई थी।
देवेन्द्र मेवाड़ी का जन्म 7 मार्च 1944 को हुआ। एम.एस-सी.(वनस्पति विज्ञान) एम.ए.(हिन्दी), पत्रकारिता में स्नात्कोतर डिप्लोमा में शिक्षित मेवाड़ी की प्रमुख कृतियाँ - भविष्य, कोख (विज्ञान कथा संग्रह), विज्ञान प्रसंग, हार्मोन और हम, सूरज के आंगन में, विज्ञान बारहमासा, सौर मंडल की सैर, फसलें कहें कहानी, पशुओं की प्यारी दुनिया आदि चर्चित किताबें हैं। उन्हें आत्माराम पुरस्कार, राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद का राष्ट्रीय पुरस्कार, मेदनी पुरस्कार, उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान पुरस्कार, विज्ञान परिषद प्रयाग द्वारा सम्मान आदि से सम्मानित किया गया।

देवेन्द्र मेवाड़ी

आदरणीय संतोष चौबे जी, कुलाधिपति, आइसेक्ट विश्वविद्यालय; डॉ. आर. गोपीचंद्रन, निदेशक, विज्ञान प्रसार; प्रोफेसर वी.के. वर्मा, कुलपति, आईसेक्ट विश्वविद्यालय; डॉ. एस. आर. अवस्थी, निदेशक संचार, आईसेक्ट विश्वविद्यालय और सभागार में उपस्थित अनुसृजन परियोजना के सभी विद्वान रचनाकार विज्ञान लेखक बंधु, अन्य गणमान्य साथियों और प्रिय विद्यार्थियो,

मैं अत्यंत आभारी हूं कि अनुसृजन परियोजना के तहत प्रकाशित विज्ञान की छब्बीस लोकप्रिय पुस्तकों के लोकार्पण के इस महत्वपूर्ण अवसर पर मुझे आपको संबोधित करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैं आप सभी का सादर नमन करता हूँ। आप ही के शहर भोपाल के नामचीन शायर बशीर बद्र के शब्दों में कहना चाहता हूं :

इबादतों की तरह मैं ये काम करता हूं
मेरा उसूल है, पहले सलाम करता हूं।

इस संबोधन के लिए आमंत्रण मिलने के बाद से ही मैं सोचता रहा कि इस अवसर पर किस विषय पर बोलूं? सोचा, विज्ञान लेखन पर बोलना तो शायद संगत नहीं रहेगा क्योंकि मैं स्वयं भी सभागार में उपस्थित विज्ञान लेखकों की बिरादरी का ही सदस्य हूँ। उन्हें क्या बताना? तो फिर, कौन-सा विषय चुनूं ? मैं समय में पीछे लौटा और 28 फरवरी 2015 की अपनी भोपाल यात्रा याद की। तब मैंने आइसेक्ट विश्वविद्यालय के इसी सभागार में श्रोताओं को सौरमंडल की सैर कराई थी। कुलाधिपति चौबे जी ने आईसेक्ट के मुख्यालय में स्टूडियो देखने का आमंत्रण दिया था। वहाँ गया, उनसे साहित्य और विज्ञान की तमाम बातें हुईं। बातों-बातों में मैंने कुमार अंबुज की 'पर्यटन' कविता का जिक्र किया, कि कवि कहता है :

मेरे लिए संभव था किसी भी जगह जाना
इसमें कोई आश्चर्य नहीं
और नहीं चमत्कार, क्योंकि मैं एक कवि निर्वात और सघन पदार्थों में से
गुजरना रोज का ही मेरा काम .....
पृथ्वी की कक्षा की पगडंडी से ही
मंगल का लाल परचम दिखता था लहराता
चलो वहाँ कोई न कोई मिलेगा मुझे
सोचते हुए खरामा-खरामा पहुंचा
मंगल ग्रह पर
वहाँ मुझे दो चंद्रमा मिले
जिन्होंने किया स्वागत...

कवि बृहस्पति पर भी जाता है और उसके चंद्रमाओं का जिक्र करता है। उनकी संख्या तब की है जब कविता लिखी गई होगी। वैज्ञानिक तथ्य-दर-तथ्य का पता लगाते हैं। उनकी यात्रा नवीनतम तथ्यों की यात्रा होती है। चौबे जी ने बताया, वैज्ञानिकों और साहित्यकारों का अपना-अपना डोमेन यानी क्षेत्र है। ये दो डोमेन हैं, लेकिन इनमें एक नजदीकी रिश्ता होना चाहिए। इनके बीच दूरी नहीं होनी चाहिए।

दीप प्रज्ज्वलन

साथियों, जब भी आईसेक्ट विश्वविद्यालय में आता हूँ तो लगता है, मां सरस्वती की गोद में आ गया हूँ जहाँ मुझे विज्ञान और साहित्य दोनों का पाथेय मिलता है। हर बार सोचता हूँ, काश मेरा बचपन लौट आता, मैं फिर विद्यार्थी बनता और तब साहित्य और विज्ञान के वातावरण से परिपूर्ण इस विश्वविद्यालय में प्रवेश लेकर अध्ययन करता। खैर, यों भी साठ की उम्र के बाद कहते हैं व्यक्ति बचपन की ओर लौटने लगता है। मैं भी लौट रहा हूँ, और आभारी हूं कि यह विश्वविद्यालय बहुत स्नेह से मुझे बुलाता रहता है।

हाँ, तो मैं कह रहा था, चौबे जी के साथ विज्ञान और साहित्य की बातें हुईं। उस दिन की वे बातें याद आईं, वे संदर्भ याद आए और मुझे लगा, विज्ञान, साहित्य और जीवन के रिश्ते पर बात करने का यह सही अवसर हो सकता है और, तब मैंने तय किया कि अपने संबोधन का विषय मैं विज्ञान, साहित्य और जीवन रखूंगा। डॉ.अवस्थी का फोन आया और मैंने उन्हें यह विषय बता दिया। वही विषय लेकर आज मैं यहां, आपके सामने मौजूद हूं।

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' का विमोचन

यह विषय चुनने के बाद से ही मैं विज्ञान और साहित्य के रिश्ते पर सोचता रहा हूं। सोचने पर सबसे पहले प्रसिद्ध ब्रिटिश भौतिक विज्ञानी और उपन्यासकार सी.पी. स्नो याद आए जिन्होंने 7 मई 1959 को सीनेट हाउस, कैंब्रिज में अपना चर्चित रीड व्याख्यान दिया था। व्याख्यान का विषय था- 'टू कल्चर्स एंड द साइंटिफिक रिवोल्यूशन'। उस व्याख्यान में सी. पी.स्नो ने कहा था कि वैज्ञानिकों और साहित्यकारों ने अपनी दो अलग-अलग दुनियाएँ बसाई हुई हैं जिनके बीच में गहरी खाई है। उनके बीच कोई संवाद नहीं है। वे एक-दूसरे के विषय के बारे में कुछ नहीं जानते और न जानना चाहते हैं। वैज्ञानिक साहित्य से दूरी बनाए रखते हैं और साहित्यकारों को विज्ञान से परहेज है। वे डिकंस के उपन्यास नहीं पढ़ते, शेक्सपियर के नाटक नहीं पढ़ते और ये विज्ञान के मामूली नियमों तक की जानकारी नहीं रखते। थर्मोडायमिक्स के दूसरे नियम के बारे में तक नहीं जानते। बल्कि, विज्ञान को निम्न कोटि का ज्ञान मानते हैं।

रजिस्ट्रार, आईसेक्ट विश्वविद्यालय का उद्‌बोधन

लेकिन, यह दूरी पैदा कब हुई? द इंस्टिट्यूट फॉर द स्टडी ऑफ सिविल सोसायटी (सिविटास) के उप-निदेशक राबर्ट ह्वेलान का कहना है कि विज्ञान और साहित्य को दो अलग समूहों में उन्नीसवीं सदी में बांटा गया। 'वैज्ञानिक' शब्द 1833 में गढ़ा गया और विज्ञान तथा साहित्य को उन्नीसवीं सदी के शुरूआती दशकों से ही अलग-अलग क्षेत्र माना जाने लगा था।

लेकिन, साथियो, विज्ञान और साहित्य दोनों ही कल्पना के सहारे सत्य और यथार्थ की खोज करते हैं। साहित्यकार अपनी इस खोज में कल्पना और भावनाओं का सहारा लेता है और शब्दों से यथार्थ के करीब पहुँचने की कोशिश करता है। दूसरी ओर, वैज्ञानिक भी अपनी कल्पना और तथ्यों का सहारा लेकर यथार्थ यानी सत्य के पास तक पहुँचने की कोशिश करता है। दोनों ही सच को उजागर करना चाहते हैं। देखिए, साहित्यकार किस तरह चंद शब्दों में हमें कटते पेड़ों और दर-ब-दर पंछी के दर्द से रू-ब-रू करा देता है। ये शब्द स्नेह कुमारी के हैं :

सभागार में दर्शक

एक परिंदा आकर रोज
मेरी खिड़कियों से टकराता है,

कभी इस इमारत की जगह
कोई दरख्त रहा होगा।

और, बस्ती के उस सूखते, अकेले पेड़ का दर्द अपने शब्दों में किस तरह कवि नंद भारद्वाज हमारे हृदय तक पहुंचा देते हैं :

ऐसा घेर-घुमेर छायादार रुख
हजारों-हजार पंछियों का
रैन बसेरा
पीढ़ियों की पावन कमाई
वह पानीदार पेड़
अब सूख रहा है भीतर ही भीतर
जमीन की कोख में।...

श्री नौटियाल और कार्यकारी संपादक

और जनाब, शायर बशीर बद्र तो महज दो पंक्तियों में पर्यावरण और परिंदों का वह दर्द बयां कर देते हैं :

अब यहाँ प्यासे परिंदे आएंगे किसके लिए
झील को सूखे हुए कितने ज़माने हो गए।

आप ही बताइए, इन कवियों के इन शब्दों में क्या पर्यावरण के पूरे हालात, उजड़ते पेड़ों और तड़पते पंछियों की पीड़ा का पूरा यथार्थ हमारी आंखों के सामने नहीं आ जाता?

देवेन्द्र मेवाड़ी और डॉ. आर.गोपीचंद्रन

यह सब सोचते हुए मुझे लग रहा था कि मेरे इस व्याख्यान का शीर्षक 'विज्ञान साहित्य और जीवन' के बजाय 'पुल पर गुफ्तगू' या 'पुल पर कुछ पल बातचीत' भी हो सकता था। लेकिन, कौन-सा पुल? कौन-सा सेतु?

वह सेतु, जो विज्ञान और साहित्य के दोनों डोमेन को जोड़ सके। जिस पर मैं जब मन चाहे, यहां और वहां चहलकदमी कर सकूं ताकि मेरे लिए विज्ञान और साहित्य के बीच कोई खाई न रहे, फासला न रहे।

और, तब मुझे विश्व प्रसिद्ध विज्ञान पत्रिका 'नेचर' में 2005 में प्रकाशित ब्रिटिश लेखक सिमोन मावेर का लेख शिद्दत से याद आया। उनके परिचित सोचते थे, वे साहित्य पढ़ाते हैं जबकि वे जीव विज्ञान के शिक्षक थे। उन्होंने 'मेंडेल्स ड्वार्फ' जैसी चर्चित पुस्तक की रचना की। मावेर को दुःख होता था कि विज्ञान और साहित्य को अलग-अलग क्यों समझा जाता है? क्यों वैज्ञानिक को सिर्फ तर्क और सिद्धांत तक सीमित माना जाता है और क्यों साहित्यकार की दुनिया केवल कल्पना और फैंटेसी मान ली जाती है? आखिर वैज्ञानिक भी तो अपनी खोज में कल्पना की उड़ान भरते हैं और लेखक भी अपनी रचना रचने के लिए तर्क का सहारा लेते हैं।

विज्ञान गीतों पर विमर्श करते संतोष कौशिक

संवेदनशील विज्ञान शिक्षक और साहित्यकार मावेर को एक बार नोबेल पुरस्कार विजेता वैज्ञानिक निकोलस टिंबरजेन का व्याख्यान सुनने का मौका मिला। ये वही टिंबरजेन थे जिन्हें प्रसिद्ध पक्षी विज्ञानी कार्ल वॉन फ्रिश और कॉनरेड लोरेंज़ के साथ 1973 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। वे कह रहे थे, 'अगर आप मनुष्य के स्वभाव को समझना चाहते हैं तो इसके बारे में इथोलॉजिस्ट यानी व्यवहार-विज्ञानी से पूछने के बजाय महान लेखकों की रचनाएं पढ़िए। दास्तोएव्स्की को पढ़िए, तालस्ताय को पढ़िए।'

मावेर लिखते हैं कि एक और रूसी विद्वान के शब्दों ने उनकी कल्पना और प्रकृति प्रेम की भावना को छू लिया। तब मोवर कीट विज्ञान के तहत पेपिलिओ डार्डेनस यानी अफ्रीकी स्वालोटेल तितली की मिमिक्री की आनुवंशिकी को समझने की कोशिश कर रहे थे।

नाट्य निर्देशक मनोज नायर

उन्होंने तब उस रूसी विद्वान के ये शब्द पढ़े, 'मेरे मन में मिमिक्री के रहस्यों के लिए विशेष आकर्षण था। उसमें मुझे मनुष्य द्वारा गढ़ी गई चीजों की तरह कलात्मक पूर्णता दिखाई देती है। अगर कोई पतंगा आकार और रंग में किसी ततैया जैसा दिखाई देता है तो वह चलने की कोशिश भी उसी की तरह करता है और अपने ऐंटेना भी ततैया की तरह घुमाता है। अगर कोई तितली पत्ती की तरह है तो उसमें न केवल पत्ती की सुंदर बनावट दिखाई देती है बल्कि उस पर कीड़ों के खाए छेद और धब्बे तक अंकित होते हैं। मैंने प्रकृति में ऐसे आश्चर्य देखे जिन्हें मैं कला में खोजता था। दोनों ही में जैसे एक जादू था, दोनों को ही एक अजीब सम्मोहन और छलावे का खेल कहा जाता सकता है।"

जानते हैं, किसने लिखे थे ये शब्द? एक प्रसिद्ध कीट विज्ञानी ने, जिसने शल्क-पंखी लेपिडॉप्टेरा गण के कम से कम 20 वंशों, प्रजातियों और उप-जातियों का नामकरण किया और 22 वैज्ञानिक शोध पत्र लिखे। इतना ही नहीं उसने रंग-बिरंगी तितलियों जैसा ही सुंदर गद्य रचा और बीसवीं सदी के कुछ चर्चित उपन्यास भी लिखे। उस रूसी मूल के प्रसिद्ध अमेरिकी लेखक का नाम है-व्लादिमीर व्लादिमिरोविच नबोकोव। 'लोलिता' उपन्यास के रचयिता। वे डार्विन के प्राकृतिक वरण के सिद्धांत से बहुत सहमत नहीं थे और कहते थे कि प्रकृति का गूढ़ कारोबार इतना सरल-सहज नहीं है।

मावेर अपनी पुस्तक 'मेंडल्स ड्वार्फ' का संदर्भ देते हुए कहते हैं कि विज्ञान में ऐथिक्स से परे भी बहुत कुछ है। इसमें कल्पना बहुत बड़ी भूमिका निभाती है। ग्रेगर मेंडर का उदाहरण देते हुए वे कहते हैं कि पाठ्य-पुस्तक से हमें मेंडल, उसके मटर के पौधों और उसके तर्क की प्रक्रिया का ही पता लगता है। जबकि, उसका कार्य मानव मेधा और कल्पना का अद्भुत उदाहरण है। यह उसका जुनून के साथ किया गया जीवन भर का काम था जिसमें उसने प्रकृति का बेहद बारीकी से अध्ययन करके उसके रहस्य का अनावरण किया। ठीक वैसे ही जैसे नील्स् बोर और अन्य भौतिक विज्ञानियों ने पदार्थ की रचना का अनावरण किया। मावेर कहते हैं, 1854 से 1871 तक मेंडल ने अपने मटर के पौधों की परवरिश, उनमें परागण करने, उन पर लेबल लगाने, पकी फसल के बीज निकालने, उन्हें सुखाने और अपने अध्ययन के नतीजों को कापियों में लिखने और लोगों को अपना काम समझाने की कोशिश करने में लंबा समय व्यतीत किया। उसका यह जुनून 17 वर्षों तक लगातार चलता रहा। उसके मठ की बगिया में उगे मटर के वे पौधे उसकी रचनात्मक दुनिया थे, ठीक उसी तरह जैसे किसी कलाकार या साहित्यकार के मन-मस्तिष्क में उसकी कला या रचना का संसार बसा होता है।

मावेर कहते हैं कि कल्पना ही सर्वोपरि है। प्रयोगों और परीक्षणों में कल्पना नए रंग भरती है। वे ये भी कहते हैं कि विज्ञान और साहित्य में सदैव 'क्रॉस-फर्टिलाइज़ेशन' होता रहा है और होता रहेगा। इससे कल्पना निरंतर आगे बढ़ती है। अनेक वैज्ञानिक, विज्ञान लेखक और साहित्यकार अपने काम में वैज्ञानिक प्रक्रिया के साथ कल्पना का प्रयोग करते आ रहे हैं। फिक्शन तथ्यों की 'एंटिथीसिस' यानी विरोधाभास नहीं है। साहित्यकार सत्य और यथार्थ की खोज करता है तो वैज्ञानिक भी सत्य को ही खोजने की कोशिश करता है। साहित्य की तरह विज्ञान भी मनुष्य और प्रकृति को गहराई से समझना चाहता है। मेंडल नहीं जानता था कि वर्षों तक जुनून के साथ काम करने का क्या नतीजा निकलेगा या उस काम से उसे क्या मिलेगा। जीते-जी उसे कुछ मिला भी नहीं। लेकिन, उस महान वैज्ञानिक ने अपनी कल्पना के बूते पर प्रकृति को पढ़ा और जीवन के बाद ही सही, उसे आनुवंशिकी विज्ञान का जनक घोषित किया गया। मेंडल हो या हीजेनबर्ग या स्टीफेन हाकिंग अथवा आर्यभट, जगदीश चंद्र बसु, सी. वी. रामन, मेघनाद साहा या सत्येन्द्र बोस, या फिर रवींद्र

नाथ टैगोर अथवा प्रेमचंद्र सभी ने अपने काम में कल्पना का छोर पकड़ कर मनुष्य और प्रकृति के गूढ़ रहस्यों का अनावरण किया।

इसलिए 'कल्पना' वैज्ञानिक और साहित्यकार दोनों की ही साझी विरासत है। उनकी खोज करने की विधि अलग हो सकती है यानी साहित्य विधि या विज्ञान विधि लेकिन ये दोनों ही विधियां उन्हें सत्य के करीब ले जाती हैं। आइए, हम भी विज्ञान और साहित्य के डोमेन के बीच इस सेतु पर चहल-कदमी करें और अपना रचनात्मक योगदान दें ताकि विज्ञान और साहित्य के बीच कि खाई को दूर किया जा सके।

यह तय मानिए कि साहित्य की निधि मानी जाने वाली कल्पना और भावनाएं हमारे विज्ञान लेखन में नए प्राण फूंक सकती हैं। अपनी संवेदनाओं को जगाने के लिए हमें अपने आसपास के विज्ञान को भी गौर से देखना चाहिए। प्रकृति की किताब में अनेक रहस्यों की इबारत लिखी हुई है। जो प्रकृति के करीब जाता है, जुनून के साथ उसे पढ़ना चाहता है, वह उस इबारत को पढ़ सकता है। कुछ समय पहले मैं मंदसौर गया था। वहां मैंने खेतों की पहरेदारी करने वाले कालू काका को जमीन में एकटक कुछ खोजते हुए देखा। मैंने पूछा, 'काका, क्या खोज रहे हैं?' वे बोले, 'इन सैकड़ों इल्लियों को यहां-वहां तेजी से जाते हुए देख रहा हूं।' मैंने कहा, 'काका, ये तो अपने मन में तितली बनने का सपना लेकर जा रही हैं।' काका चौंके और पलट कर बोले, 'अच्छा, आपको पता है कि ये तितलियां बनेंगी?' मेरे हामी भरने पर वे बहुत खुश हुए और बोले, 'मैं लोगों को बहुत समझाता हूं कि ये तितलियां बनेंगी लेकिन वे विश्वास ही नहीं करते।' काका ने प्रकृति की किताब पढ़ी थी और मैंने अपनी जीव विज्ञान की किताब।

वहीं पास में एक पेड़ पर दस-बारह धनेश पक्षी एक-दूसरे का पीछा करते हुए खेल रहे थे। काका ने उस पेड़ का नाम हुड़क-नीम बताया। मैंने काका और उनके तीन साथियों को धनेश के बारे में बताते हुए कहा कि वह पिता और पति के रूप में बहुत बड़ी जिम्मेदारी निभाता है। पत्नी जब पेड़ के कोटर में बंद होकर अंडे देती है तो वहां उसके पंख गिर जाते हैं। नर धनेश कोटर के छेद से पत्नी को भोजन देता रहता है। फिर अंडों से एक-एक कर बच्चे निकलते हैं और बाहर आते हैं। पिता उनकी भी देखभाल करता है। उन्हें उड़ना सिखाता है। बाद में मां धनेश के नए पंख निकल आते हैं। वह कोटर से बाहर निकल आती है। मैंने उन लोगों से कहा कि हम पारिवारिक जिम्मेदारी संभालने के लिए धनेश से बहुत कुछ सीख सकते हैं।

इसी तरह एक दिन मिरांडा कालेज से प्रोफेसर संज्ञा का संदेश मिला कि अपनी छात्राओं को बिहारी का एक दोहा पढ़ा रही हूं। दोहा है :

जटिल नीलमनि जगमगति सींक सुहाई नांक,
मनौ अली चंपक-कली बसि रस लेतु निसांक।

यानी, नायिका की नाक की लौंग को चंपा-कली समझ कर उस पर भंवरा मंडरा रहा है। संज्ञा ने लिखा कि जगन्नाथ दास रत्नाकर ने अपनी टीका में लिखा है कि चंपा के फूल पर भंवरे नहीं मंडराते। आप विज्ञान लेखक हैं, सच क्या है बताइएगा। मैंने वनस्पति विज्ञान की पुस्तकें पढ़ीं। चंपा के बारे में पढ़ा और माह भर चंपा के फूलों का अवलोकन करता रहा। पता लगा कि उसके फूलों में मकरंद नहीं होता है। यानी कीटों को यह रहस्य मालूम है। वे हमसे कहीं अधिक वनस्पति विज्ञान की जानकारी रखते हैं।

तो, ये थे आसपास विज्ञान के कुछ रंग। अगर आप गौर से पेड़-पौधों और पशु-पक्षियों को देखेंगे तो आपको उनके जीवन के अनेक रहस्यों का पता लगेगा। इस ज्ञान को भी हमें अपने विज्ञान लेखन में शामिल करना चाहिए। इन्हीं शब्दों के साथ मैं अब अपनी बात समाप्त करता हूं। धन्यवाद, नमस्कार।

dmewari@yahoo.com

वैज्ञानिक सोच पूर्वाग्रह से मुक्त है

विश्वमोहन तिवारी

वैज्ञानिक दृष्टिकोण या सोच या समझ या मनोवृत्ति क्या है? कुछ विद्वान यह आवश्यक मानते हैं कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण में वैज्ञानिक विधियों का उपयोग हो। वैज्ञानिक विधि में उत्सुकता, जिज्ञासा, अवलोकन, मापना- जोखना, विश्लेषण, परिकल्पना और जाँच पड़ताल के सोपान चढने के पश्चात सिद्धान्त बनते हैं, और विज्ञान का निर्माण होता है। ऐसा नहीं समझना चाहिये कि वैज्ञानिक विधि केवल वैज्ञानिक कार्यों के लिये ही होती है, वरन यह हमारे जीवन के लगभग सभी कार्यों पर लागू हो सकती है। यह तो हो सकता है कि हम हमेशा इस पद्धति का उपयोग अनेक कारणों से न कर पाएं, या न करें, किन्तु हमें यथा सम्भव प्रयत्न तो करना ही चाहिये क्योंकि इस पद्धति में धोखा या अंधविश्वास या पूर्वाग्रह सफल नहीं हो पाते। दुनिया में चालाक लोग आम आदमी के अज्ञान का या उनके अंधविश्वासों का या पूर्वाग्रहों का लाभ उठाकर उनका शोषण करते हैं या लूट लेते हैं। इस पद्धति का उपयोग अपने कार्य तथा निष्कर्ष को वस्तु सापेक्ष तथा व्यक्ति निरपेक्ष रखने के लिये किया जाता है, जो अधिकांशतः हो भी जाता है। किन्तु अनेक दार्शनिकों की मान्यता है कि वैज्ञानिक विधियां भाषा और संस्कृति से प्रभावित रहती हैं, अतः यह भी कार्य तथा निष्कर्ष को पूरी तरह वस्तु सापेक्ष तथा व्यक्ति निरपेक्ष नहीं रख पाती हैं। सामान्यतः हमें इस द्वंद्व की चिन्ता नहीं करना पड़ती है और हम अपना कार्य यथा सम्भव वैज्ञानिक पद्धति से करते हुए धोखा-धड़ी से और पूर्वाग्रहों से बचते हुए कर सकते हैं। वैज्ञानिक दृष्टिकोण या सोच या समझ या मनोवृत्ति का एक और लाभ यह है कि ऐसे व्यक्ति के मन या मस्तिष्क में अनावश्यक द्वन्द्वनहीं होते अतः उसकी सोच सुलझी हो सकती है। ऐसे व्यक्ति धार्मिक कट्टरता से तो बचते ही हैं वे वैज्ञानिक कट्टरता से भी बच सकते हैं। वैज्ञानिक दृष्टिकोण या सोच, समझ या मनोवृत्ति वाले व्यक्ति का मस्तिष्क खुला होता है, और विरोधी को सुनने के लिये तैयार रहता है, उसमें असुरक्षा की भावना बहुत कम हो जाती है और वह समझता है कि मतभेद के कारण मनभेद नहीं करना है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण में यह मान्यता है कि कोई भी प्रेक्षक प्रति का अवलोकन बिना पूर्वाग्रह के तथा बिना संस्कृति के प्रभाव के कर सकता है, अर्थात वैज्ञानिक अवलोकन प्रेक्षक से निरपेक्ष होते हैं और दूसरी तरफ अनेक आधुनिक वैज्ञानिक विद्वान, विशेषकर क्वाण्टम यांत्रिकी मानने वाले, यह मानते हैं कि वैज्ञानिक अवलोकन प्रेक्षक सापेक्ष होते हैं। यह विवाद चल रहे हैं और वैज्ञानिक तो अपना कार्य किये जा रहे हैं क्योंकि अन्ततः किसी भी सिद्धान्त को सत्य होने के लिये परीक्षण में खरा उतरना ही पड़ता है।

आम भाषा में सामान्य व्यक्ति के लिये लिखे गए लेखों में अनेक विचारक वैज्ञानिक दृष्टिकोण या सोच या समझ या मनोवृत्ति को (साइन्टिफिक टैम्पर) लगभग समानार्थी मानते हैं। वैज्ञानिक सोच या वैज्ञानिक समझ की शर्त है कि निर्णय विषयनिष्ठ जानकारी तथा वस्तुनिष्ठ तर्क के आधार पर लेना चाहिये, यही शर्त विज्ञान में कार्य करने की भी है। मैं भी इस लेख में उपरोक्त बारीकियों में न जाते हुए वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा वैज्ञानिक सोच (साइन्टिफिक टैम्पर) को लगभग समानार्थी मान रहा हूं। किसी भी सोच या विचार प्रक्रिया में (कविता आदि रचनात्मक साहित्य में नहीं) बुद्धि का स्थान मन के ऊपर होना चाहिये क्योंकि मन इच्छाओं, संवेदनाओं, आग्रहों का भी स्रोत तथा घर होता है जब कि निर्णय बुद्धि द्वारा मन पर पूरे नियंत्रण के साथ लेना चाहिये। इस तरह वह सोच यथा सम्भव उस व्यक्ति के पूर्वाग्रहों से मुक्त हो सकती है। स्पष्ट है कि इस प्रक्रिया में शिक्षा द्वारा बुद्धि का समुचित विकास होना तथा सशक्त होना आवश्यक है। मंतव्य है कि हिन्दू तथा अन्य धर्मों में हमेशा मन पर बुद्धि के नियंत्रण को वस्तुनिष्ठ सोच के लिये आवश्यक माना है।

सत्य को खोजने की विज्ञान में अनेक पद्धतियां हैं जिनके अनुसार देखने (सोचने) को वैज्ञानिक दृष्टिकोण कहते हैं। उदाहरण के लिये उस की एक पद्धति है आगमनिक (इन्डक्टिव)। इस पद्धति में, मान लें, कि हमें कौओं का रंग निश्चित करना है। तब हम कह सकते हैं कि मैंने एक कौआ देखा उसका रंग काला है। फिर दो कौए और देखे, उनके रंग भी काले, फिर तीन और फिर दस और फिर चुने गए सौ कौए

देखे, सभी के रंग काले। तब हम कह सकते हैं कि कौओं का रंग काला होता है। किन्तु भविष्य में यदि एक भी कौआ सफेद दिख गया तब हमें पुराने नियम की जाँच पड़ताल करना पड़ेगी। आगमनिक पद्धति में कुछ घटनाओं का अवलोकन किया जाता है और उनके आधार पर एक वैश्विक नियम या परिकल्पना प्रस्तुत की जाती है। यदि यह और अवलोकनों द्वारा पुष्ट होती है तो एक सिद्धान्त के रूप में स्वीकार की जाती है। किन्तु भविष्य में यदि इस सिद्धान्त का विरोध करती कोई घटना आ जाती है तब इसकी पुनः जाँच पड़ताल की जाती है। आगमनिक सिद्धान्त तो हमेशा सत्य के कठघरे में खड़े रहते हैं, क्योंकि भविष्य में कब कोई घटना आकर उस सिद्धान्त को चुनौती दे दे, कोई नहीं जानता, और ऐसी ही सोच वैज्ञानिक सोच कहलाती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा विज्ञान के ज्ञान में भी गहरा सम्बन्ध है, किन्तु हमेशा अनिवार्य नहीं। वैज्ञानिक दृष्टिकोण या सोच मनुष्य को, चाहे वह आगमनिक पद्धति को जानता हो या न जानता हो, ऐसी चुनौती के लिये तैयार रखती है। ऐसी सोच के लिये बुद्धि का समुचित विकास आवश्यक है।

आगमनिक सिद्धान्त से एक निष्कर्ष यह भी निकलता है कि खोजे गए सत्य की अपेक्षा सत्य की खोज की प्रक्रिया अधिक महत्वपूर्ण होती है। इसे यदि हम अपने जीवन पर लागू करें तब हम बहुत से निरर्थक विवादों से बच सकते हैं। इसके अभ्यास के लिये भी आगमनिक सिद्धान्त का जानना अनिवार्य नहीं है। यह भी थोड़े से सोचने से समझ में आ सकता है। हमें अपनी बात पर अड़ने की जरूरत नहीं है, अपने विचार को अपनी अस्मिता या आत्म सम्मान से नहीं जोड़ना है, बस सत्य को खोजना है। अर्थात् स्पष्ट है कि वैज्ञानिक समझ तथा सामान्य बोध (कामन सैन्स) में गहरा सम्बन्ध है।

बरसों पहले एक लेख पढ़ा था, 'क ख ग धर्म विज्ञान संगत है'। वह लेख अपने तर्कों में बहुत कमजोर था, और वह अपनी अवधारणा सिद्ध नहीं कर पाया। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं निकलता कि कखग धर्म विज्ञान संगत नहीं है, या कि क ख ग धर्म विज्ञान संगत है, वरन यह कि केवल वह लेख अपने उद्देश्य में असफल हुआ। वैज्ञानिक सोच में और तार्किक सोच में गहरा सम्बन्ध है।

आइये एक विचार प्रयोग करें। मान लें कि सौ व्यक्तियों ने मुम्बई के पांच व्यापारियों से आम खरीदे। पांच व्यक्तियों के पास जो आम पहुंचे वे सड़े थे। ऐसे एक व्यक्ति ने पुलिस से शिकायत कर दी। पुलिस ने पड़ताल करने पर पाया कि सारे सडे आम उन पांच व्यापारियों में से केवल एक व्यापारी द्वारा ही भेजे गए थे। पुलिस ने उस व्यापारी पर मुकदमा चलाया और न्यायालय में उस व्यापारी ने अपनी बचत में कहा कि उसने तो तीस व्यक्तियों को आम भेजे थे और पच्चीस व्यक्तियों को आम ठीक मिले अतः वह दोषी नहीं है। न्यायाधीश ने फैसला दिया कि यद्यपि उस व्यापारी द्वारा भेजे गए सारे आम सड़े नहीं थे, किन्तु सारे सड़े आम उसी व्यापारी के आमों में से थे। अतः वह दोषी है और उसे जुर्माना देना होगा। इस घटना में कोई वैज्ञानिक सिद्धान्त तो नहीं लगता किन्तु सोच तार्किक है, और सच्चाई की ओर ले जाती है, इसलिये वैज्ञानिक है।

वैज्ञानिक दृष्टि या वैज्ञानिक सोच (साइन्टिफिक टैम्पर) में मस्तिष्क खुला रहता है और घटनाओं को समझने के लिये वह किसी पूर्वाग्रह से ग्रस्त नहीं रहता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि वह खोज करते समय किसी मान्यता या योजना, जो कि खोज के लिये आवश्यक होती है, के तहत कार्य नहीं करता, वरन वह ऐसा करते समय इसके प्रभाव के प्रति सचेत रहता है, और विपरीत तथ्यों के मिलने पर उस मान्यता में परिष्कार के लिये तैयार रहता है।

(पुस्तक अंश)

विश्वमोहन तिवारी का जन्म 26 फरवरी 1935 को जबलपुर में हुआ। उन्होंने एमटेक, क्रेनफिल्ड इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी, इग्लैंड तथा विशारद, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से शिक्षा प्राप्त की तथा एयर वाइसमार्शल हुए। उनकी प्रसिद्ध कृतियां विज्ञान का आनंद, बोधिवृक्ष के नीचे, आनंद पक्षी निहारन का, सरल वैदिक गणित, खाड़ी युद्ध 91, यात्राओं का आनंद, नई दिशा, सुनो मनु, हमारे कलाम, उपग्रह के बाहर भीतर, इलेक्ट्रॉनिकी युद्ध कला आदि हैं। उन्हें आत्माराम पुरस्कार, मेघनाथ साहा पुरस्कार, सहस्राब्दि हिन्दी सेवी सम्मान, इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार, रक्षा मंत्रालय पुरस्कार, राहुल सांस्कृत्यान पुरस्कार, राष्ट्र गौरव सम्मान, विवेकानंद पुरस्कार, मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार, आर्य भट्ट सम्मान, तकनीकी मौलिक लेखन पुरस्कार, विज्ञान भूषण सम्मान, हिन्दी संवाहक सम्मान आदि पुरस्कार प्राप्त हुए हैं।

प्रस्तुत किताब में उन्होंने भारत में विज्ञान की परंपरा और वर्तमान स्थिति पर गंभीरता से विचार किया है। भारत में विज्ञान की परंपरा का प्रारम्भ वैदिक युग से ही हो जाता है। सनातन धर्म मूलतः विज्ञान का विरोध नहीं करता, क्योंकि उसकी सोच विज्ञान संगत है। इस पुस्तक में विज्ञान तथा विज्ञान संचार के विभिन्न आयामों को विभिन्न दृष्टियों से प्रस्तुत किया गया है।

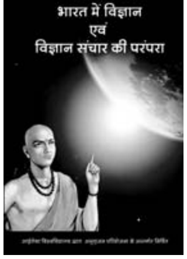

हिन्दी विज्ञान लेखन परिवर्तनकारी है

शिवगोपाल मिश्र

यह तम या अंधकार अज्ञान है जिससे निकल कर ज्योति अर्थात् प्रकाश में जाने की आकांक्षा है। स्पष्ट है कि यह अज्ञान से निकलकर ज्ञान की ओर यात्रा करने का आह्वान है। यह ज्ञान जब विशिष्ट प्रकार का ज्ञान हो तो उसे विज्ञान कहते हैं। प्राचीन साहित्य में ज्ञान-विज्ञान साथ-साथ प्रयुक्त मिलते हैं। वर्तमान काल में विज्ञान अंग्रेजी शब्द Science का पर्याय बन चुका है। विज्ञान वह ज्ञान है जिसमें भौतिक जगत के बारे में सूक्ष्मातिसूक्ष्म जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। विज्ञान ज्ञान की विधा है। जिस तरह साहित्य मनोभावों का कोश है, उसी तरह विज्ञान भौतिक जगत की रचना की निर्देशिका है। साहित्य के साथ विज्ञान का संयोग मन तथा तन का संयोग है, अन्तर्जगत और बाह्य जगत का मिलन है। पाश्चात्य जगत ने विज्ञान में जैसी उन्नति की है, उससे अब सारा विश्व चमत्कृत है। विश्व का हर देश, हर व्यक्ति, हर पुरुष, हर नारी उससे अवगत होकर उससे लाभान्वित होना चाहता है। विज्ञान मनुष्य को उन्नति की दिशा दिखलाने वाला ज्ञान बन चुका है। अब विज्ञान अनेक शाखाओं-प्रशाखाओं में बँटकर अपनी पूर्णता प्राप्त करने के लिए अहर्निश प्रयासरत है। विज्ञान के ज्ञाता यानी विज्ञानी वह सब कुछ करने में लगे हैं, जिससे मानव-कल्याण हो। विज्ञान का मार्ग कल्याण का, सुख शान्ति का मार्ग है,बशर्ते कि मनुष्य विवेक का सहारा ले। ऐसे ज्ञान को प्राप्त करके उस ज्ञान को जन-जन तक पहुँचाना, जनकल्याण की दिशा में सही मार्ग होगा। ज्ञान पहुँचाने का यह कार्य लेखन द्वारा होता आया है। ज्ञान को किसी न किसी रूप में मन-मस्तिष्क में संचित करके उसे व्यक्त करना अनिवार्य है। इसीलिए विज्ञानवेत्ताओं या विज्ञानियों ने विज्ञान लेखन को वरीयता दी है। जिस ज्ञान को वे प्रयोगों द्वारा प्राप्त करते रहे हैं, उसे वे अपनी लेखनी से प्रकट भी करते आये हैं और इस ज्ञान को विभिन्न स्तर के लोगों तक पहुंचाने का कार्य विज्ञान लेखक करते रहे हैं। विज्ञान लेखक को विज्ञान का ज्ञाता होना होता है अन्यथा वह अपना कार्य कुशलतापूर्वक नहीं कर सकता। इस प्रकार विज्ञान लेखन स्वयं किसी वैज्ञानिक द्वारा या फिर उसके ज्ञान से लाभान्वित व्यक्ति द्वारा किया जाता है। ऐसा लेखन पुराकाल से होता आया है और आगे भी होता रहेगा-भले ही भाषा एवं विचारों को व्यक्त करने के साधन बदल जायँ। विज्ञान लेखन का उद्देश्य प्रयोग द्वारा अर्जित एवं संचित ज्ञान को, विशेष ज्ञान को, अधिकाधिक लोगों तक पहुंचाना है जिससे वे जागरूक हो सकें और इस ज्ञान से लाभान्वित हो सकें।

यह संसार अति विस्तीर्ण है। इसके विभिन्न भूभागों में सभ्यता के विभिन्न स्तरों को प्राप्त लोग रह रहे हैं। वे सभी अपने जीवन को बेहतर बनाना चाहते हैं किन्तु उन सबों को वह ज्ञान प्राप्त नहीं जिससे ऐसा कर सकें। इसीलिए उन्हें विकसित देशों का मुंह ताकना पड़ता है- स्वयं को विकासशील श्रेणी में रखकर विकसित श्रेणी प्राप्त करने का सपना देखना पड़ता है। विज्ञान संसार के कोने-कोने तक पहुंचे, इसके लिए शिक्षित वर्ग सदैव प्रयत्नशील रहा है। यह वर्ग विज्ञान की शिक्षा-दीक्षा ग्रहण कर उसमें पारंगत होकर उसे वितरण करने का प्रयास करता आया है। वह विज्ञान लेखन द्वारा जन-जन को विज्ञान में दीक्षित करने का प्रयास करता रहा है। वह विज्ञान के व्यावहारिक पक्ष को उजागर करता रहा है।

आज विज्ञान जिस लक्ष्य तक पहुँचा है, उसे प्राप्त करने में सदियाँ लगी हैं फलतः प्रारम्भिक विज्ञान का स्तर निश्चित रूप से आज के स्तर से निम्न एवं भिन्न था किन्तु तब उसे उसी रूप में समझने-समझाने की जरूरत थी। आज अब के विज्ञान स्तर के अनुरूप विज्ञान को समझने-समझाने के लिए लेखन होना है। स्पष्ट है कि समय बीतने के साथ विज्ञान लेखन का स्वरूप बदलता रहा और जो भाषाएँ प्रयुक्त होती रही होंगी, उनमें भी बदलाव आया होगा। हमारे देश में पुराकाल में संस्कृत विज्ञान की भाषा रही। वर्तमान में हिन्दी विज्ञान की भाषा है जिसे राष्ट्रभाषा होने का गौरव प्राप्त है। सम्प्रति विज्ञान लेखन में राष्ट्रभाषा हिन्दी का परिष्कृत रूप प्रयुक्त हो रहा है किन्तु प्रायः इसे सरल बनाने की आवश्यकता जताई जाती है। एक बार जब विज्ञान के शास्त्रीय स्वरूप के अनुरूप संस्कृतनिष्ठ हिन्दी (खड़ी बोली का परिष्कृत रूप) को विज्ञान लेखन के लिए स्वीकृत कर लिया गया-विविध भाषाओं के विद्वानों की सहमति से, तो फिर उसके प्रयोग पर आपत्ति क्यों? विज्ञान के लिए भी अन्य शास्त्रों (अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र) की ही तरह की भाषा प्रयुक्त होनी है तभी तो वह अर्थवहन कर पावेगी। यह अर्थवहनीयता पारिभाषिक शब्दों के बल पर सम्भव है। इसीलिए विज्ञान के अंग्रेजी पारिभाषिक शब्दों को हिन्दी पर्यायों में बदला जा चुका है

और इन पारिभाषिक शब्दों के कोश तैयार किये जा चुके हैं तथा सरकार की यही मंशा रही है कि इन पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग करके विज्ञान की भाषा को अर्थपूर्ण एवं प्रांजल बनाया जाये। इसे ग्रामीण भाषा (बोली) से भिन्न भाषा होनी है। इसे आम बोलचाल की भाषा से ऊपर उठना है, तभी विभिन्न प्रदेशों में इसकी एकसमान भावप्रेषणीयता होगी। विज्ञान की शब्दावली को क्लिष्ट कहने वाले भूल जाते हैं कि विज्ञान में पारंगत विद्वानों के विचार-विनिमय की भी भाषा यही है। इसे शिष्ट समाज की भाषा होनी है। विश्वस्तर पर विचारों के आदान-प्रदान की भाषा होनी है। देश की जनता के जीवन-स्तर को सुधारने में विज्ञान की उपादेयता इसी भाषा के माध्यम से साकार की जानी है। इस बिन्दु पर हमें पीछे मुड़कर अपने प्राचीन संस्कृत वाङ्मय पर दृष्टिपात करना होगा। तब ज्योतिर्विज्ञान, गणित आदि के सारे ग्रन्थ संस्कृत में लिखे जाते थे तो क्या तब भी ऐसी ही चिल्ल-पों हुई होगी? और यदि हुई तो संस्कृत के स्थान पर प्राकृत, पाली जैसी भाषाओं का प्रयोग हुआ और उसी क्रम में 1800 ई. तक हम विकृत भाषाओं का ही प्रयोग करते रहे। सौभाग्यवश उन्नीसवीं सदी में हिन्दी में प्रौढ़ गद्य के विकास के साथ ही विज्ञान लेखन शुरू हुआ। स्पष्ट है कि ज्यों ज्यों हिन्दी विकास करेगी, प्रौढ़ होगी त्यों त्यों विज्ञान लेखन सुदृढ़ होगा। इसीलिए पारिभाषिक शब्दों को संस्कृतनिष्ठ रखा गया, जिससे प्राचीन पारम्परिक ज्ञान की शृंखला भंग न हो।

इस तरह उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ से लेकर आज इक्कीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक हिन्दी में ही विज्ञान लेखन हो रहा है जिसमें भाषा की दृष्टि से, विषय की दृष्टि से तथा उसकी उपयोगिता की दृष्टि से लगातार परिवर्तन दिखेंगे। तभी तो हिन्दी विज्ञान लेखन के भूत, वर्तमान और भविष्य पर विचार करने की आवश्यकता हुई। वर्तमान में हम विज्ञान युग में जी रहे हैं। विज्ञान ने हमारी जीवनचर्या को बुरी तरह से आच्छादित कर रखा है। हमें लगता है कि यह वर्तमान युग की देन है। पहले ज्ञान-विज्ञान की चर्चा साथ साथ चलती थी किन्तु वर्तमान काल में विज्ञान अपने समुन्नत रूप में उपस्थित हो चुका है और वह सम्पूर्ण विश्व को अपनी गिरफ्त में करके, मानव जीवन की सनातन से चली आ रही जीवन शैली और विचारधारा को बदल चुका है। आज सारा विश्व विज्ञानमय बन चुका है। फिर भी कुछ ऐसे भूभाग हैं जहाँ अभी भी विज्ञान की पहुँच नहीं हो पाई। किन्तु भविष्य में वहाँ भी विज्ञान की पैठ सम्भावित है।

हमारा देश ज्ञान-विज्ञान में अग्रणी रहा है। हमारे आदि ग्रन्थ चारों वेद विज्ञान के स्रोत रहे हैं। इनके आधार पर आठवीं-नौवीं सदी तक विविध वैज्ञानिक प्रयोग एवं प्रयास होते रहे। उसके बाद विदेशी शक्तियों के वशीभूत होकर विज्ञान विषयक हमारी सोच एवं हमारे प्रयोग समाप्त हो गये। पहले तो इस्लामी शासन और फिर अंग्रेजी शासन के फलस्वरूप पढ़े लिखे भारतीयों को क्रमशः फारसी तथा अंग्रेजी सीखने के लिए बाध्य होना पड़ा जिससे संस्कृत वाङ्मय से उनका सम्पर्क शिथिल पड़ता गया। अंग्रेजी शासन काल में ऐसी देशी भाषाओं को विकसित करने की आवश्यकता अनुभव की गई जो वर्तमान सन्दर्भ में जनसामान्य तक ज्ञान-विज्ञान को वहन कर सकें। इस तरह खड़ी बोली हिन्दी का विकास हुआ। यह खड़ी बोली सहसा उठ खड़ी नहीं हुई। काफी श्रम करके ही यह वर्तमान स्वरूप प्राप्त कर सकी है। कहते हैं कि अमीर खुसरो ने जिस भाषा का प्रयोग अपनी रचनाओं में किया उसी का परिवर्द्धित रूप हिन्दी या खड़ी बोली है। हमारा उद्देश्य हिन्दी की उत्पत्ति बताना नहीं अपितु उसके गद्य रूप पर विचार करना है। इस गद्य को परिष्कृत करने में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की महती भूमिका रही है। उनके बाद पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी के प्रयास से उसे आधुनिक मानक स्वरूप प्राप्त हुआ है। और यही परिष्कृत गद्य हिन्दी में विज्ञान लेखन का माध्यम बना। यद्यपि विज्ञान, जिसे अंग्रेजी में Science कहा जाता है, भारत के लिए कोई नया ज्ञान नहीं है किन्तु पाश्चात्य जगत में विज्ञान को जिस तरह परिभाषित एवं व्यवहृत करके उन्नति की गई और उससे जो जनजागृति हुई, उसका प्रभाव हमारे देश पर पड़ना स्वाभाविक था। हमारे देश के कुछ प्रतिभाशाली व्यक्तियों ने विदेश जाकर अंग्रेजी माध्यम से विज्ञान में निपुणता प्राप्त की और अपने देश की जागृति हेतु उस ज्ञान को प्रचारित-प्रसारित करने का बीड़ा उठाया। इस तरह बंगाल, मद्रास, महाराष्ट्र में विज्ञान की लहर फैली।

(पुस्तक अंश)

13 सितम्बर 1931 में जन्में शिवगोपाल मिश्र एम.एस-सी, डी.फिल, साहित्य रत्न में शिक्षित डॉ. मिश्र विज्ञान परिषद् प्रयाग इलाहाबाद के प्रधानमंत्री हैं। वे शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान के निदेशक भी रहे। उन्होंने कई विज्ञान कोश व ग्रंथों की रचना की जिसमें हिन्दी में 26 तथा अंग्रेजी में 11 पुस्तकों सहित 5 पाठयपुस्तकें, नौ साहित्यिक पुस्तकें, महाकवि निराला पर तीन पुस्तकें उल्लेखनीय हैं। आपको आत्माराम पुरस्कार, भारत भूषण सम्मान आदि से विभूषित किया गया है।
विज्ञान को समझने-समझाने के लिए हिन्दी विज्ञान लेखन के क्रमिक विकास का विहंगावलोकन आवश्यक है। वस्तुतः ऐसी ही सोच के कारण हिन्दी विज्ञान लेखन के भूत, वर्तमान तथा भविष्य विषयक यह पुस्तक गम्भीरता से विचार करके रोचक तरीके से लिखी गई है।

सूर्य कोण से पक्षी का उड़ान निर्धारण

डॉ. स्वाति तिवारी

अधिकांश चिड़ियों के लिए प्रवास का सीधा अर्थ है अपने प्रजनन स्थान को जाना और लौट आना, लौटने के लिए हो सकता है वे पहले वाले रास्ते के अलावा कोई दूसरा रास्ता भी अपनाएँ, लेकिन इनके अलावा कुछ ऐसी सैलानी चिड़ियां भी हैं जो अपनी प्रवास यात्रा और भी जटिल रूप में पूरी करती हैं। वे अपने प्रजनन स्थान को जाती हैं और परिवार को जन्म देने का काम पूरा करके किसी और दूसरी जगह, जैसे मन बहलाव के लिए, चली जाती हैं। अपने जाड़े के स्थान को लौटते समय वे सीधे न आकर फिर बीच में प्रजनन स्थान पर थोड़े समय के लिए रूकती हैं। इस प्रकार चिड़ियों की प्रवास यात्रा में कुछ आना-जाना ऐसा होता है कि जिसको समझ पाना ही कठिन है। इस आने-जाने के मुख्य लक्षण ये हैं कि वे जाती हैं और वापस भी लौट आती हैं और यह काम नियमित रूप से होता है और इसके पीछे इनका मुख्य उद्देश्य होता है वर्ष की विभिन्न प्रकार की मौसमी स्थितियों के अनुरूप रहने योग्य स्थितियां खोज निकालना।

पक्षियों की यात्रा में उत्तरी गोलार्द्ध से दक्षिणी गोलार्द्ध की तरफ जाने वाली यात्रा सबसे प्रसिद्ध है। जाड़ों और बर्फ से बचने के लिए पक्षी भूमध्य रेखा को पार करते देखे गए हैं। उदाहरण के लिए गोल्डेन फ्लोवर आठ हजार मील की दूरी तय कर अर्जेंटीना के पम्पास क्षेत्र में लगभग नौ माह रहते हैं। इसी तरह साइबेरिया के पक्षी भारत में (भोपाल में भी) प्रवास पर आते हैं। भोपाल की बड़ी झील व वनविहार में हंस (हेडडेगोज), कुररी (ब्लैक टर्न), चैती, छोटी बतख (कामन टील), सिंकप (पिनटेल), तेलियर (स्टार्लिंग), हेरोन्स, खंजन, फ्लेमिंगो वगैरह प्रवास पर आते हैं। जलीय पक्षी रात या दिन किसी भी समय अपनी यात्रा करते हैं जबकि कुछ पक्षी जैसे रॉबिन, क्रेन, मुर्गाबी, अबाबील, बाज, कौए केवल दिन में यात्रा करते हैं।

प्रस्थान से पहले पक्षी हमारी तरह प्रवास की तैयारी भी करते हैं। लगेज नहीं ले जा सकते पर वे अपने अंदर ही यात्रा की जरूरत को एकत्र करते हैं। उनका मनोविज्ञान तो नहीं समझा जा सकता पर देखा गया है कि वे खाना अधिक मात्रा में खाती हैं ताकि चर्बी एकत्र कर सके। यह चर्बी की परत यात्रा में ऊर्जा प्रदान करती हैं। कई पक्षियों में सामूहिक उड़ान होती है अतः वे झुण्ड में उड़ने अभ्यास भी करती है। ये पक्षी सूर्य की रोशनी से भी अपनी लम्बी यात्रा का मार्ग प्रशस्त करते हैं। सूर्य प्रकाश स्तंभ की तरह काम करता है।

वे अपना मार्ग सूर्य के कोण से निर्धारित करती हैं। प्रवास करने वाली यात्रा में चिड़ियाएं अक्सर 600 से 1300 मीटर की ऊंचाई पर उड़ती हैं। कई प्रजातियों में चिड़िया का बच्चा जब पहली बार प्रवास पर निकलता है तो वह माता-पिता से पहले ही निकल पड़ता है जिससे हम यह आशय निकाल सकते हैं कि पक्षी सूर्य के अनुसार अपना मार्ग खोजते हैं वह उनकी सहज प्रकृति होती होगी।

कई प्रजातियाँ छोटे-बड़े दलों में यात्रा करती है और कुछ अकेले ही यात्रा पर चली जाती है। ये सब अपने भोजन की व्यवस्था तो दिन में करती हैं पर अधिकांश रात में उड़ना पसंद करती हैं क्योंकि रात को आक्रामक खतरे अपेक्षाकृत कम होते हैं। माना जाता है कि चिड़ियां लगभग 30 किमी प्रति घंटा के हिसाब से उड़ती हैं और वैज्ञानिकों का मानना है कि प्रवासी चिड़िया एक दिन में औसतन आठ घंटे उड़ती है। अतः प्रवास का एक पड़ाव 250 किमी से कम ही होना चाहिए।

बड़ी चिड़ियां प्रायः 80-85 किमी प्रति घंटा के हिसाब से उड़ लेती हैं। अतः वे लम्बा फासला तय करती हैं। समुद्र को पार करने वाले पक्षी चूंकि कहीं रुकने की गुंजाइश नहीं होने से उन्हें लगातार उड़ना पड़ता है, ऐसे पक्षियों के दल लगातार छत्तीस-छत्तीस घंटे तक बिना रुके उड़ते हैं। कई बार लगातार उड़ते हुए पक्षी थके हुए होते हैं वे मौसम की मार, आँधी-तूफान में फँस कर मर जाते हैं। प्रवास यात्रा कठिन, थकाने वाली और जोखिमपूर्ण होती है पर पक्षी यह जोखिम उठाते हैं। कुछ पक्षी जैसे किंगफिशर, बतासी, बाज आदि अलग-अलग अपनी

ही टोली में चलते हैं जबकि अबाबील, गिद्ध, नीलकण्ठ दूसरी प्रजातियों की टोली में भी चलते हैं। इसका कारण आहार या उनका आकार-प्रकार भी हो सकता है। कुछ प्रजातियों में देखा गया है कि नर और मादा अलग-अलग दल में चलते हैं। नर अपने निर्धारित स्थान पर पहले पहुंचते हैं और घोंसला बनाते हैं मादा बाद में आकर प्रजनन करती हैं और शिशु पालती हैं।

पक्षी कितनी संख्या में प्रवास पर जाते हैं इसका अंदाजा लगाना जरा कठिन है। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि यूरोप और एशिया के उत्तरी प्रदेशों में पैदा होने वाली चिड़ियों में से लगभग 40 प्रतिशत प्रवासी होती हैं अर्थात आधे से कुछ कम। यूरोप की गायक चिड़ियों की 68 प्रजातियां प्रवासी है और भारत में पाई जाने वाली 1205 प्रजातियों में 300 प्रजातियों की चिड़ियां जाड़ों में दूर-दूर स्थानों से आती हैं। दूसरे अर्थ में भी जिस पैमाने पर प्रवास होता है, वह आश्चर्यजनक है। उत्तरी ध्रुव की टर्न चिड़िया हर साल उत्तरी ध्रुव से उड़कर दक्षिणी ध्रुव पहुंचती है और फिर लौटती है। दोनों ओर मिलाकर फासला लगभग 3500 किमी होता है। वैसे कई हजार किलोमीटर की यात्राएं करना चिड़ियों के लिए कोई अनहोनी बात नहीं है। यूरोप में प्रजनन करने वाली अनेक प्रजातियां जाड़ों में दक्षिण अफ्रीका तक चली जाती हैं। यह भी सही है कि बहुत बड़ी संख्या में चिड़ियां भूमध्य सागरीय देशों में उड़कर पहुंचती हैं और ठहरती हैं।

भारत में प्रवासी चिड़ियां अपना जाड़ा काटने के लिए भारत आती हैं। यहां वे प्रजनन नहीं करती। बहुत-सी चिड़ियां जो पूर्वी यूरोप में या उत्तरी और मध्य एशिया या हिमालय की पर्वत श्रेणियों में रहती हैं, जाड़े के दिनों में भारत में प्रायद्वीप में आ जाती हैं। इस प्रकार अधिकांश यात्रा में प्रवास पर जाने वाली चिड़ियों में प्रायः वे ही होती हैं जो समुद्री किनारों, नदियों और झीलों के इर्द-गिर्द जुटने वाली बतखें और जल में विहार करने वाली होती हैं। वैज्ञानिकों का मानना है कि दूरी के साथ-साथ उड़ान की ऊंचाई भी महत्वपूर्ण है। देखा गया है कि कुछ पक्षी प्रवास के दौरान जमीन से कुछ फीट ऊपर ही उड़ते हैं जबकि सामान्यरूप से तीन हजार फीट की ऊंचाई पर उड़ान भरते हैं। ऊंचाई पर उड़ने में मुश्किल यह होती है कि जैसे-जैसे पक्षी उड़ान ऊंचाई नापते हैं, वैसे-वैसे उड़ान की गति और संतुलन रखने में मुश्किल आती है चूंकि अधिक ऊंचाई पर हवा का धनत्व बहुत कम होता जाता है और हवा की उपलब्धता काफी कम हो जाती है। रडार के द्वारा यह ज्ञान हुआ है कि कुछ छोटे-छोटे पक्षी पांच हजार फीट से पन्द्रह हजार फीट तक की ऊंचाई पर उड़ान भरते हैं। यह भी ज्ञात हुआ है कि हिमालय या एंडेस पर्वतमाला को पार करते हुए ये पक्षी लगभग बीस हजार फीट या उससे भी ऊंचे उड़ते हैं।

एक रिपोर्ट के अनुसार आर्कटिक क्षेत्र के कुररी (टर्न) पक्षी सबसे ज्यादा दूरी तय करने वाले पक्षी हैं। और इतनी ही दूरी तय कर वापस लौट जाते हैं। इस तरह की उड़ान भरने वालों में सुनहरी बटान, टिटहरी (सैण्ड पाइपर) एवं अबाबील है।

पक्षियों के इस अद्भुत गुण में काफी नियमितता पाई जाती है। लम्बे अध्ययनों के फलस्वरूप यह तथ्य स्पष्ट हुआ है कि पक्षी नियत समय पर नियत स्थल पर पहुंच जाते हैं। जैसे अबाबील और पिटपिटी फूरकी (हाऊस कैन) ठीक 12 अप्रैल को वाशिंगटन पहुंच जाती है। खंजन (ग्रे वैगटेल) के संदर्भ में भी समय निर्धारित है। 'प्रवास' एक अदभुत ईश्वरीय प्रकृति है जो पक्षियों को मिली है प्रवासी पक्षी हमारे मेहमान हैं हमें 'अतिथि देवो भव' की तर्ज पर उनका स्वागत व सम्मान करते हुए संरक्षण देना चाहिए। पक्षी प्रवास से एक प्रश्न सहज ही उठता है कि क्या पक्षियों के मस्तिष्क में कोई जी.पी.एस. सिस्टम होता है जो दिशा-निर्देश देता है ?

(पुस्तक अंश)

डॉ. स्वाति तिवारी का जन्म 17 फरवरी 1960 में धार म.प्र. में हुआ। एम.एस-सी (प्राणीशास्त्र), एलएलबी, एम.फिल तक शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात आपने समाजशास्त्र में शोधकार्य किया। कई संगठनों की संचालक डॉ. तिवारी का हिन्दी साहित्य में भी महत्वपूर्ण स्थान है। अब तक उनकी 15 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है जिसमें बैगनी फूलों वाला पेड़, अकेले होते लोग, स्वाति तिवारी की चुनिंदा कहानियां और सवाल आज भी जिन्दा हैं विशेष उल्लेखनीय है। आपको कई उल्लेखनीय सम्मान और पुरस्कार प्राप्त है जिसमें राष्ट्रीय मानवधिकार आयोग दिल्ली का सम्मान, वगेश्वरी सम्मान, राष्ट्रीय लाड़ली मीडिया पुरस्कार शामिल हैं। आप अफ्रीका और भारत के विश्व हिन्दी सम्मेलन में मध्यप्रदेश शासन का प्रतिनिधित्व कर चुकी हैं। भोपाल के पक्षी नामक पुस्तक में आपने प्रवासी पक्षियों के जीवन के वैज्ञानिक पक्ष उजागर किया है।
पक्षी सभी उम्र के व्यक्तियों के लिए आकर्षण का केंद्र बने रहते हैं। पक्षियों को जानने की जिज्ञासा जैसे - वे कहां से आते हैं और कहां पाए जाते हैं, उनका भोजन, अंडा और अन्य विशेषताओं से संबंधित जानकारी इस पुस्तक में उपलब्ध कराई गई है। लेखिका स्वयं जीव-विज्ञान की विद्यार्थी रही हैं और उन्होंने पक्षियों को अपने कैमरे में कैद कर पुस्तक के माध्यम से उपलब्ध कराया है। लेखिका को विश्वास है कि इसे पढ़कर पाठक स्वयं बर्ड वॉचिंग कर सकेंगे।

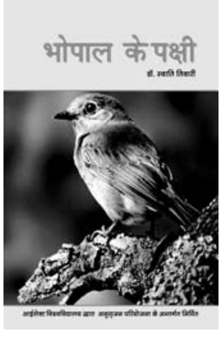

पादप संरचना में कोशिकाओं की भूमिका

प्रेमचंद्र श्रीवास्तव

ऊतक संवर्धन के इतिहास का मूल आरंभ वहाँ से माना जा सकता है जब रॉबर्ट हुक (Robert Hooke) नामक लंदनवासी एक वैज्ञानिक ने सर्वप्रथम इस तथ्य का उद्‌घाटन किया कि पादपों की संरचना में कोशिकाओं की भूमिका होती है। उन्होंने कॉर्क की अनुप्रस्थ काट में दिख रहे सूक्ष्म छिद्रों को कोशिका (cell) का नाम दिया था। वास्तव में रॉबर्ट हुक में विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिक प्रयोगों को करने का ऐसा जुनून था कि अन्य लोगों की दृष्टि में वे मानसिक असंतुलन से ग्रस्त समझे जाते थे। परन्तु यह उनका जुनून ही था जिसके फलस्वरूप विज्ञान जगत के परिदृश्य में एक क्रान्तिकारी मोड़ लाने वाले ज्ञान की उपलब्धि हुई। उन्होंने अपने सूक्ष्मदर्शी यंत्र के माध्यम से यह देखा कि कॉर्क तथा कोयले में बड़ी संख्या में सूक्ष्म छिद्र जैसी संरचना दिखाई देती है। आगे चल कर पादपों के ऊतकों में भी उन्हें लगभग वैसे ही सूक्ष्म छिद्र दिखाई पड़े। मधुमक्खी के छत्ते जैसी संरचना वाले इन अति सूक्ष्म छिद्रों या कोष्ठों को उन्होंने, जैसा पहले ही कहा जा चुका है, 'सेल' (cell या कोशिका) का नाम दिया। यह निस्संदेह एक युगान्तरकारी खोज थी क्योंकि आगे चल कर इसी पर कोशिका विज्ञान की आधारशिला रखी गई।

वस्तुतः रॉबर्ट हुक केवल निर्जीव कोशिका भित्ति (cell wall) का ही पता लगाने में सफल हो पाये थे। कोशिकाओं में विद्यमान जीवद्रव्य और उसके महत्व का पता तो बाद में अन्य वैज्ञानिकों के प्रयासों से लगा। लगभग तीन दशकों के बाद ल्यूवेनहॉक ने 1692 में सर्वप्रथम प्रोटोज़ोआ और जीवाणु को देखा और उन्हें 'अत्यन्त लघु आकार वाले जीव' का नाम दिया। इसके पश्चात् बहुत लंबे अंतराल के बाद 1831 में रॉबर्ट ब्राउन नामक एक अंग्रेज वैज्ञानिक ने बताया कि सभी कोशिकाओं के अन्दर नाभिक अथवा केन्द्रक (nucleus) विद्यमान होते हैं। यह भी एक युगान्तरकारी घोषणा थी। शीघ्र ही वनस्पति विज्ञानियों ने भी इसकी पुष्टि की। वास्तव में रॉबर्ट ब्राउन के काफी पहले सन् 1756 में हेनरी-लुई दुहामेल दु मांश्यू (Henri-Louis Duhamel du Monceau) द्वारा किए गए प्रयोगों ने यह सिद्ध कर दिया था कि पादपों के वल्कुट या अंतःत्वचिका (cortex) रहित स्थानों पर स्वतः कैलस (callus) का निर्माण होने लगता है। मांश्यू महोदय द्वारा एल्म वृक्षों पर किए गये ये प्रयोग पादप ऊतक संवर्धन का प्रारंभिक चरण कहे जा सकते हैं। इसी के लगभग 100 वर्षों के बाद अंतः त्वचिका रहित पादपों से कैलस निर्माण की प्रक्रिया को ट्रेकुल (Trecul) नामक वैज्ञानिक ने अन्य अनेक प्रकार के पेड़ों में देखा। 1838 में एम.जे. श्लीडेन (M.J.Schleiden) एवं 'oku (Schwann) नामक वैज्ञानिक द्वय ने यह पुष्ट कर दिया था कि प्रत्येक पौधे या प्राणी का निर्माण कोशिकाओं से ही होता है। कोशिकाएँ ही पादप या प्राणि संरचना की प्राथमिक अथवा मूलभूत घटक हैं। इन वैज्ञानिक द्वय ने सर्वप्रथम एक कोशिका सिद्धान्त की स्थापना की और बताया कि समस्त जीवन ऐकिक (individual) कोशिकाओं पर ही निर्भर है। उनकी इस अद्‌भुत क्षमता के विषय में 1878 में वोख्तिंग (Vochting), 1884 में वीज़नर (Wiesner) और 1893 में रेशिन्गर (Rechinger) नामक वैज्ञानिकों ने भी सूक्ष्म अध्ययन किए।

(पुस्तक अंश)

10 जुलाई 1939, बांसी जिला सिद्धार्थ नगर, उत्तरप्रदेश में जन्मे प्रेमचंद्र श्रीवास्तव ने (वनस्पति शास्त्र) एम.एस-सी उत्तीर्ण करने के बाद पादप विषाणु एवं मृदा कवक पर शोध कार्य किया। अब तक लगभग 550 लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। विज्ञान पर अंटार्टिका, भारतीय सभ्यता के साक्षी, पेड़-पौधों का रोचक संसार, जीव प्रौद्योगिकी के बढ़ते कदम, वनस्पति विज्ञानी डॉ. जगदीशचंद्र बोस आदि पुस्तकें प्रकाशित, चर्चित और पुरस्कृत हुई। आपने कई पत्रिकाओं का संपादन भी किया। विज्ञान की गतिविधियों में आपका सक्रिय योगदान रहा। कोशिकाओं के ऐसे समूह जो संरचना और कार्य में एक जैसे होते हैं, उन्हें ऊतक या टिश्यू कहते हैं। जैव-विविधता के संरक्षण की दिशा में ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा विलुप्तप्रायः वनस्पतियों एवं जीवों की विभिन्न प्रजातियों का विकास किया जा रहा है। ऊतक संवर्धन तकनीक के बढ़ते प्रयोग एवं महत्व को ध्यान में रखते हुए पुस्तक रची गई है। हिंदी में ऊतक संवर्धन संबंधी साहित्य के अभाव को दूर करने का प्रयास प्रस्तुत प्रति के माध्यम से किया गया है।

भाषा की समृद्धि है वैज्ञानिकता

महेन्द्र कुमार माथुर

सृष्टि के आदि काल से आज तक मानव इस सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय की दुरूह पहेली को समझने की उत्कट कामना अपने अन्तर मन में पाले हुए है। फिर चाहे वे जन सामान्य हों या विशेष जैसे आइजक न्यूटन, डॉ.अलबर्ट आइन्स्टीन, स्टीफन हॉकिंग - सभी इस सृष्टि के रहस्यों को सुलझाने का सतत् प्रयास करते रहे हैं। इस सौर मण्डल में मानव ऐसा प्राणी है जो विचारवान है। किन्तु, विडम्बना यह है कि उसका ज्ञान लगभग नगण्य है, शून्य है। विचार उसके मस्तिष्क में- सामुद्रिक लहरों की तरह उठते और गिरते रहते हैं किन्तु, निश्चित तर्क संगत ज्ञान के अभाव में स्थिर नहीं रह पाते हैं। ज्ञान ब्रह्माण्ड में भरा पड़ा है। भारतीय परम्परा में ज्ञान का आदि स्रोत परमात्मा या ब्रह्म है। मानव अपने इन्द्रियकरण के माध्यम से ज्ञान ग्रहण करता है। वर्तमान काल में उसके ज्ञान को निखारने का काम माता पिता और शिक्षकगण करते हैं। किन्तु, सृष्टि के आदि काल में यह किसने किया होगा ?

ज्ञान के प्रचार प्रसार के लिए भाषा ही सशक्त माध्यम है। हम अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए जो भी भाषा जानते हैं, उसका प्रयोग करते हैं। किसी भाषा का समृद्ध होना उसकी वैज्ञानिकता, शब्द भण्डार और व्याकरण पर निर्भर करता है। पश्चिम के विद्वानों ने इसके लिए एक कल्पना प्रस्तुत की है। इसका नाम विकासवाद है। इस वाद की व्याख्या वे तीन चरणों में करते हैं, ब्रह्माण्डीय पिण्डों का विकास, प्राणी जगत् का विकास और बौद्धिक विकास। इस बौद्धिक विकास के साथ ही, पश्चिम के विद्वान, भाषा के विकास का वाद भी प्रस्तुत करते हैं। यहाँ बहुत ही सामान्य सा प्रश्न उठता है कि यदि भाषा का विकास क्रम बद्ध हुआ है तो हमारी आज की भाषा प्रारम्भिक भाषा की तुलना में श्रेष्ठ और वैज्ञानिक होनी चाहिए। किन्तु, ऐसा है नहीं। भारत की प्राचीनतम भाषा वेद और उससे निकली संस्कृत आदि भाषाएँ सर्वाधिक वैज्ञानिक भाषाएँ हैं। इस विकास वाद की संक्षिप्त विवेचना से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रारम्भ से लेकर अब तक हमें ब्रह्माण्डीय पिण्डों की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय (Creation, Sustaintion & Disulution) का एक क्रम निरन्तर दृष्टिगोचर हो रहा है। इसे कोई चाहे तो विकास कह सकता है किन्तु प्राणियों के शरीरों, देह रचनाओं को लेकर हम विकास नहीं, ह्रास देखते हैं। प्रारम्भ का मानव बहुत बलिष्ट और ऊँचा पूरा था किन्तु आज उसका बल न्यून से न्यून ही हुआ है। यही तथ्य उसके ज्ञान पर भी घटता है। आदि ज्ञान हमारे वेदों में है और उस ज्ञान संपदा के अद्वितीय होने में विश्व के किसी भी विद्वान को कोई संदेह नहीं है।जैसा ऊपर लिखा गया है हमारी प्रारम्भिक भाषा 'वेद' भाषा थी। इस भाषा का लौकिक व्यवहार 'संस्कृत' भाषा के रूप में आज तक प्रचलित है। इन दोनों भाषाओं की वैज्ञानिकता स्वतः स्थापित है। कोई भी भाषा, तब वैज्ञानिक कही जाती है जब उसका अपना स्वतंत्र शब्द शास्त्र हो, तर्क संगत व्याकरण और लिपि हो। ये तीनों बातें एक साथ संस्कृत भाषा पर घटती हैं। जब कोई स्वतंत्र चिन्तन किसी भी देश में विकसित होता है तो, उसे व्यक्त करने के लिए- आवश्यक शब्दों का या तो भाषा वैज्ञानिक सृजन करते हैं या किसी अन्य समृद्ध भाषा से शब्द उधार लेते हैं। ऐसा सभी देशों में सदैव हुआ है। अतः, हमें जब भी किसी देश के विज्ञान, दर्शन या साहित्य को समझना होता है तो वहाँ के सम्पूर्ण समाज, संस्कृति और भाषा को आत्मसात करना अनिवार्य होता है।

(पुस्तक अंश)

महेन्द्र कुमार माथुर का जन्म 20 जुलाई 1940 को हुआ। वे बीएचईएल भोपाल के सेवानिवृत्त उपमहाप्रबंधक हैं। अनेक प्रशासन अकादमी और इंस्टीट्यूट और विज्ञान सेन्टर के संकाय सदस्य होने के साथ आपने प्रबंध की विषयों पर दर्जनों लेख लिखे। हिन्दी अंग्रेजी अनुवाद पर आपका वृहद काम है। इस पुस्तक में ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति पर प्राचीन भारतीय एवं आधुनिक अवधारणाओं का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। साँख्य दर्शन ब्रह्माण्ड के रहस्यों को समझने की दिशा में 'मील का पत्थर' है। आइंस्टीन के सिद्धांत, स्टीफन हाकिंग के विचार एवं बिग बैंग थ्योरी का समुचित समावेश किया गया है।

बायोइन्फार्मेटिक्स का इतिहास

डॉ. अर्चना पाण्डेय

बायोइन्फार्मेटिक्स के इतिहास की ओर यदि दृष्टि डाली जाये तो पता लगता है कि इसका आरम्भ 1968 में मार्गरेट डेहॉफ (Margaret Dayhoff) द्वारा हुआ जिन्होंने प्रोटीन अनुक्रमों के आंकड़े एकत्र किये और उसे प्रोटीन अनुक्रम व संरचना का एटलस कहा। बायोइन्फार्मेटिक्स का प्रयोग अधिकतर बहुत बड़े आंकड़ों का प्रबन्धन करने में होता है। जीनोमिकी तथा प्रोटियोमिकी का अध्ययन बायोइन्फार्मेटिक्स की सहायता के बिना मुश्किल है। जीनोमिकी का अर्थ एक तरह से जीनोम का विश्लेषण करना होता है। डी.एन.ए. एक आनुवांशिक पदार्थ है तथा इसी डी.एन.ए. के एक सम्पूर्ण समूह को जीनोम कहते हैं। दूसरी तरफ प्रोटियोमिकी प्रोटीन के एक सम्पूर्ण समूह के अध्ययन को कहते हैं। यह कहना गलत न होगा कि बायोइन्फार्मेटिक्स का लक्ष्य जटिल जैविक तंत्र को समझना है। इसका उपयोग एक कोशिका से लेकर जटिल जैविक तंत्रों को समझने में किया जाता है। जीनोम व प्रोटियोम के विभिन्न भागों के मध्य अन्योन्य क्रियाओं का अध्ययन करके जीवविज्ञान के कठिन प्रश्नों का उत्तर ढूंढ़ा जा सकता है। इस जानकारी के पश्चात ही मनुष्य शरीर में होने वाले रोगों व उनके निदान की दिशा प्राप्त होती है।

पूर्व में बायोइन्फार्मेटिक्स का अर्थ मात्र डी.एन.ए., आर.एन.ए. एवं प्रोटीन अनुक्रमों का प्रबन्धन एवं विश्लेषण था। यद्यपि अनुक्रम निर्धारण के कम्प्यूटेशनल तरीकों की जानकारी 1960 से थी परन्तु बहुत कम लोग इसमें रुचि ले रहे थे। इसका मुख्य कारण था कि आंकड़ों की संख्या कम थी। बायोइन्फार्मेटिक्स के आरिम्भक दौर में किये गये महत्वपूर्ण प्रयोगों में एक था-अनुक्रमों की समानता खोजने का जिसके माध्यम से एक वायरल जीन के उद्‌गम की पहचान करनी थी। इस अध्ययन में वैज्ञानिकों ने एक प्रोग्राम का प्रयोग किया जिसे एफ.ए.एस.टी.पी. कहा (First sequence similarity searching programme-FASTP)। इस अध्ययन के फलस्वरूप वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि कैन्सर के लिये जिम्मेदार वायरस का अनुक्रम पहले से ज्ञात कोशकीय पी.डी.जी.एफ. जीन के लगभग समान है। इस आश्चर्यजनक परिणाम ने वैज्ञानिकों में एक अन्तदृष्टि पैदा की और वे यह समझने में सफल हुये कि यह वायरल अनुक्रम किस तरह कैन्सर पैदा करता है। जीवविज्ञान को समझने में कम्प्यूटर के इस उपयोग ने एक तरह से खलबली पैदा कर दी और बायोइन्फार्मेटिक्स नाम की विज्ञान की यह शाखा तेजी से विकसित होने लगी। ज्यों-ज्यों डी.एन.ए. अनुक्रम निर्धारण की नयी-नयी तकनीकें निकलती गयीं, बायोइन्फार्मेटिक्स नामक इस विज्ञान में सूचनाओं और आंकड़ों का जमावड़ा बढ़ता चला गया। जोएन फॉक्स के अनुसार जिस तरह सन् 1600 में सूक्ष्मदर्शी यंत्र का विकास होने से जीवविज्ञान में क्रान्ति आ गयी थी और लेवेनहॉक ने कोशिका को पहली बार इस यंत्र की सहायता से देखा था, उसी प्रकार डी.एन.ए. अनुक्रम निर्धारण की नयी-नयी तकनीकों ने बायोइन्फार्मेटिक्स के क्षेत्र में क्रान्ति ला दी। इसी का परिणाम है कि अब जीन बैंक की स्थापना हो चुकी है जिसमें विभिन्न जातियों व प्रजातियों के डी.एन.ए. अनुक्रम सम्बन्धी आंकड़े उपलब्ध हैं।

(पुस्तक अंश)

एम.एस-सी (रसायन शास्त्र), डी.फिल और पी.एचडी तक शिक्षा प्राप्त डॉ. अर्चना पाण्डेय सीएमपी डिग्री कॉलेज इलाहाबाद विश्वविद्यालय में एसोसिएट प्रोफेसर हैं। आपका जन्म 30 जून 1961 को इलाहाबाद में हुआ था। आप विज्ञान परिषद इलाहाबाद की संयुक्त सचिव तथा नेशनल चिल्ड्रन साइंस कांग्रेस की जिला समन्वयक हैं। आपकी पुस्तकें आकस्मिक आविष्कार, रेडियम की जनक मैडम क्यूरी एवं नाभिकीय ऊर्जा प्रकाशित एवं चर्चित हैं। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का होमी जहांगीर पुरस्कार आपको प्राप्त है। बायोइन्फार्मेटिक्स वर्तमान में विज्ञान के विशाल वृक्ष की सबसे नवीन शाखा के रूप में तेजी से विकसित हो रही है। यह अपने आप में जीव विज्ञान, गणित, कम्प्यूटर विज्ञान, भौतिकी के नियम एवं रसायन विज्ञान को समेटे हुये है।

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

डॉ. दिनेश मणि

जीवाश्म ईंधन के दहन और प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन के कारण जलवायु परिवर्तन की गंभीर समस्या उत्पन्न हुई है। यदि जलवायु परिवर्तन को समय रहते न रोका गया तो लाखों लोग भुखमरी, जल संकट और बाढ़ जैसी विपदाओं का शिकार होंगे। यह संकट पूरी दुनिया को प्रभावित करेगा। यद्यपि जलवायु परिवर्तन का सबसे अधिक असर गरीब देशों पर पड़ेगा। इसके साथ ही इसका सबसे ज्यादा असर ऐसे देशों को भुगतना पड़ेगा, जो जलवायु परिवर्तन के लिए सबसे कम जिम्मेदार हैं। पिछड़े और विकासशील देशों पर जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न समस्याओं का खतरा अधिक होगा। जलवायु परिवर्तन आर्कटिक क्षेत्र, अफ्रीका और छोटे द्वीपों को अधिक प्रभावित कर रहा है। उत्तरी ध्रुव (आर्कटिक) शेष दुनिया की तुलना में दोगुनी दर से गर्म हो रहा है। वैज्ञानिकों के अनुसार आगामी कुछ वर्षों में ग्रीष्म ऋतु के दौरान उत्तरी ध्रुव की बर्फ पिघल जाएगी। एक अन्य अध्ययन के अनुसार ऐसा छः वर्ष के दौरान भी हो सकता है। पिछले 100 वर्षों में अंटार्कटिका के तापमान में दोगुनी वृद्धि हुई है। इसके कारण अंटार्कटिका के बर्फीले क्षेत्रफल में भी कमी आई है। इस प्रकार वहां की पारिस्थितिकी में होने वाले बदलावों के कारण वहां उपस्थित समस्त जीव भी प्रभावित होते हैं। यदि तापमान में वृद्धि इसी तरह होती रहीं तो इस सदी के अंत तक एल्प्स पर्वत शृंखला के लगभग 80 प्रतिशत हिमनद (ग्लेशियर) पिघल जाएंगे। हमारे लिए यह चिंता का विषय है कि हिमालय क्षेत्र के हिमनद विश्व के अन्य क्षेत्रों के हिमनदों से अधिक तेजी से पिघल रहे हैं।

धरती के तापमान में वृद्धि के कारण हिमनद और ध्रुवीय प्रदेशों की बर्फ पिघलने की रफ्तार बढ़ गई है जिसके परिणामस्वरूप महासागरों का जल स्तर औसतन 27 सेंटीमीटर ऊपर उठ चुका है। जलवायु विज्ञानियों के अनुसार यदि वायुमंडल में ग्रीन हाउस गैसों में जमाव का सिलसिला जारी रहा तो धरती के तापमान में वृद्धि होती रहेगी जिसके परिणामस्वरूप हिमनद और ध्रुवीय इलाकों की बर्फ पिघलने की रफ्तार बढ़ने से सागर तटीय इलाकों के डूबने का खतरा बढ़ जाएगा और महासागरों का बढ़ता जल स्तर मालदीव जैसे हजारों द्वीपों को डुबा देगा। इसके अलावा कार्बन डाई ऑक्साइड की बढ़ती मात्रा के कारण महासागरीय पारिस्थितिक तंत्र भी प्रभावित हुए हैं। आज महासागरीय जल में अम्लता की मात्रा बढ़ती जा रही है, जिसके कारण महासागरों में रहने वाले जीवों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। इसके अतिरिक्त महासागरों की कार्बन डाईऑक्साइड गैस को सोखने की क्षमता में भी दिनोंदिन कमी हो रही है। प्रदूषण के कारण पारिस्थितिकी-तंत्र को काफी नुकसान पहुंचता है और इस कारण से पृथ्वी पर व्यापक उथल-पुथल मच सकती है।

(पुस्तक अंश)

डॉ. दिनेश मणि 15 जून 1965 को सुल्तानपुर में जन्मे। एम.एस-सी, डीफिल, डी.एस-सी, में शिक्षा प्राप्त इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं। अब तक आपने विज्ञान विषयों पर 50 से अधिक हिन्दी में किताबें लिखी हैं। 8 पुस्तकों का लेखन अंग्रेजी में तथा 100 शोध पत्र लिखे हैं। अब तक आपके 1000 से अधिक प्रकाशित और 30 वार्ताएं दूरदर्शन और आकाशवाणी प्रसारित हुए हैं। सरस्वती नामित पुरस्कार, सूचना प्रौद्योगिकी राष्ट्रीय पुरस्कार, प्रकृति ऊर्जा पुरस्कार, अनुसृजन सम्मान, डॉ. संपूर्णानंद नामित पुरस्कार, बाबू राव विष्णु पराड़कर नामित पुरस्कार जगदीश गुप्त सर्जना पुरस्कार, बाबू श्यामसुन्दर दास सर्जना पुरस्कार, डॉ. जगदीश चंद्र बोस पुरस्कार, आत्माराम पुरस्कार, आदि से सम्मानित डॉ.मणि की यह पुस्तक जलवायु और उसके घटक, जलवायु परिवर्तन के कारक, जलवायु परिवर्तन के प्रभाव, जलवायु परिवर्तन और वैश्विक तापन, जलवायु परितर्वन और पर्यावरण, जलवायु परिवर्तन और जैव-विविधता, जलवायु परिवर्तन और कृषि, जलवायु परिवर्तन और मानव स्वास्थ्य, जलवायु परिवर्तन से सम्बन्धित समझौते एवं सम्मेलन विषयक जानकारी प्रस्तुत करती है।

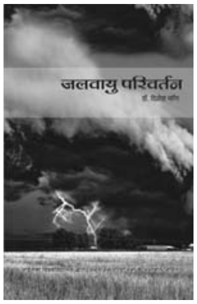

ब्लैक होल का विश्लेषण रहस्यमयी

प्रदीप कुमार श्रीवास्तव

ब्रह्माण्ड में पाये जाने वाले सूक्ष्मतम कणों की दुनिया से निकल कर इस लेख में हम ब्रह्माण्ड में मौजूद सबसे भीमकाय पदार्थ पिंडों के पास चलेंगे। यह पिंड हैं, ब्लैक होल। ब्लैक होल यानि 'कृष्ण विवर' एक ऐसा शब्द है जिसके बारे में जन साधारण समय-समय पर समाचार पत्रों अथवा पत्रिकाओं में पढ़ा करते हैं। फिर भी यह जिज्ञासा बनी रहती है कि ब्लैक होल वास्तव में क्या होता है, इसकी संरचना क्या होती है, इसके गुण क्या होते हैं, इत्यादि। आमतौर से सभी के लिये यह एक अजीबो गरीब रहस्यमय वस्तु है जो ब्रह्माण्ड में पायी जाती है, जिसका सम्बन्ध खगोल - विज्ञान से है, जिसकी खोज एक दुरूह कार्य है। इस लेख में हम भ्रांतियों से भरपूर ब्लैक होल के ऊपर छाई हुई कुहासे की इन परतों को हटाकर, उसका एक वैज्ञानिक परिचय प्राप्त करने का प्रयास करेंगे। विज्ञान के दृष्टिकोण से ब्लैक होल के विश्लेषण के कई स्तर हैं। हर स्तर पर विषय अधिक गूढ़ वैज्ञानिक सिद्धान्तों के, महीन और महीनतर, जाल में घिरता चला जाता है। लोक परिचय के स्तर पर इन गहन स्थितियों की व्याख्या संभव नहीं है और न ही आवश्यक। फिर भी हम भौतिकी के कुछ मूलभूत तथ्यों, जिनसे सामान्यतया उत्सुक जन-साधारण परिचित हैं, को दोहराना चाहेंगे ताकि ब्लैक होल की संरचना को आसानी से समझा जा सके।

सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में विश्व विख्यात ब्रिटिश वैज्ञानिक आइज़ेक न्यूटन ने यह दर्शाया था कि ब्रह्माण्ड में कहीं भी, किसी भी दो पदार्थ-पिंडों के बीच एक बल लगता है जो उन पिंडों को एक दूसरे की ओर खींचता (आकर्षक) है। न्यूटन ने इसे गुरुत्वाकर्षण कहा और इसके परिमाण (Magnitude) की गणना की। इस आकर्षक बल के कारण दोनों पिंड एक दूसरे की ओर चलते हैं। जैसे-जैसे उनके बीच की दूरी कम होती जाती है, यह बल बढ़ता जाता है तथा दोनों पिंड और ज़्यादा गति सें खिंचते चले जाते हैं। गुरुत्व बल की विशेषता यह है कि यह सदैव आकर्षक होता है और सभी प्रकार के पदार्थ-कणों के बीच लगता है। इसी का परिणाम है कि पेड़ से टूटकर सेब पृथ्वी की ओर खिंचता/गिरता है। इसी प्रकार, यदि हम किसी वस्तु को ऊपर की ओर फेंकते (प्रक्षेपित करते) हैं तो पृथ्वी के गुरुत्व बल के कारण उसकी गति कम होती जाती है तथा अन्ततः वह वस्तु ऊपर रुककर वापस धरती पर गिरती है। प्रारम्भ में वस्तु का वेग (या उसकी गतिज ऊर्जा) जितनी अधिक होगी, वह उतना अधिक ऊपर की ओर जाती है। ऊपर जाने पर वस्तु की गतिज ऊर्जा या वेग क्रमशः कम होता जाता है और जब यह शून्य हो जाता है तो वस्तु रूक जाती है। भौतिकी का सिद्धान्त कहता है कि ऊर्जा कभी नष्ट नहीं होती है। यह अपना स्वरूप बदलती है। गतिज उर्जा जैसे-जैसे कम होती है, वह पृथ्वी तथा प्रक्षेपित वस्तु की सामूहिक गुरुत्व-ऊर्जा में बदलती जाती है।

एक सीमा से अधिक वेग से यदि किसी वस्तु को प्रक्षेपित किया जाये तो वह पृथ्वी के गुरुत्व क्षेत्र से बाहर निकल कर अन्तरिक्ष में चली जाती है। इस को 'पलायन वेग' (Escape Velocity)[1] कहते हैं। इसका मान पृथ्वी के लिये 11.2 किलोमीटर प्रति घंटा है। किसी भी अन्तरिक्ष यान को पृथ्वी से किसी अन्य ग्रह पर भेजने के लिये उपरोक्त न्यूनतम 'पलायन वेग' से प्रक्षेपित करना पड़ता है। यह बातें ब्रह्माण्ड में किसी भी अन्य द्रव्य पिंड पर भी लागू होती हैं। यदि किसी पिंड का द्रव्यमान अधिक हो तो वह अधिक गुरुत्वाकर्षण बल लगायेगा, फलस्वरूप उसकी सतह से बाहर अन्तरिक्ष में प्रक्षेपित करने के लिये पलायन वेग का मान भी अधिक होगा। इससे भी ज़्यादा

महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि यदि द्रव्यमान M के पदार्थ को अधिक घना (घनत्व) कर के कम त्रिज्या R के गोले में संकुचित कर दिया जाये तो भी पलायन वेग का मान बढ़ जाता है।

उपर्युक्त तथ्य के आधार पर फ्रांसीसी वैज्ञानिक लापलास ने द्रव्यमान M के एक ऐसे गोलाकार पिंड के बारे में विचार किया जिसकी सतह पर पलायन वेग, प्रकाश के वेग (जिसे c से दर्शाते हैं) के बराबर हो। ऐसी स्थिति में पिंड की त्रिज्या का मान पलायन वेग के सूत्र में $v=c$ रखने से मिल जायेगा। इस विशेष त्रिज्या को हम R_s से दर्शाते हैं।

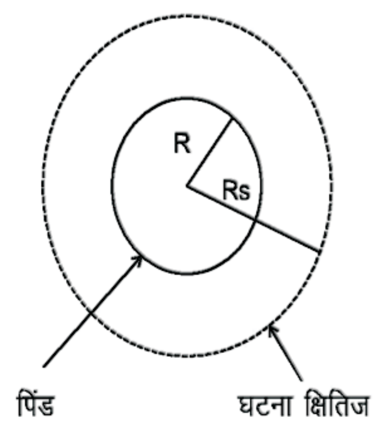

अर्थात, यदि किसी पिंड की त्रिज्या R, तनिक भी R_s से कम हो जाये तो उस पिंड की सतह से निकला हुआ प्रकाश भी पिंड के गुरूत्व क्षेत्र को भेद कर बाहर अन्तरिक्ष में पलायन नहीं कर सकता। द्रव्यमान M के गोलाकार पिंड के लिये संबंधित R_s का मान एक क्रांतिक (Critical) सीमा है। यदि पिंड, R से कम त्रिज्या के गोले में संकुचित हो जाये तो उस पिंड पर होने वाली किसी भी घटना से उत्सर्जित प्रकाश (या कोई अन्य विद्युत-चुंबकीय सिग्नल) पिंड के गुरुत्वाकर्षण को पछाड़ कर दूर अंतरिक्ष में निकल कर नहीं आ पायेगा। वस्तुतः ऐसा कोई भी सिग्नल पिंड के केन्द्र से R_s दूरी के भीतर बंध जायेगा, मानो कि R_s त्रिज्या की काल्पनिक गोलाकार सतह (Surface) एक अवरोधक के रूप में उस पिंड को चारों ओर से घेरे हुए है। इस काल्पनिक अवरोधक सतह को उस पिंड का 'घटना क्षितिज' कहा जाता है।

हम जानते हैं कि कोई भी वस्तु हमें तभी दिखाई देती है जब या तो उसके द्वारा निकलने वाला (उत्सर्जित) प्रकाश हम तक पहुँचे, या फिर उस पर बाहर से गिरने वाला प्रकाश परावर्तित (Reflect) होकर हम तक पहुँचे। ऐसा पिंड जो अपने घटना-क्षितिज से घिरा है, किसी ऐसे प्रेक्षक (Observer) को दिखाई नहीं देगा जो पिंड के घटना-क्षितिज के बाहर अन्तरिक्ष में मौजूद हो। ब्रह्माण्ड में विद्यमान इन सभी प्रेक्षकों के लिये यह पिंड सदैव अदृश्य ही रहेगा। बाहर से उस पर यदि कोई प्रकाश छोड़ा भी जाये तो वह क्षितिज के अन्दर जाने के बाद वापस नहीं लौटेगा। इस प्रकार से यह एक ऐसा होल (गड्ढ़ा) हो गया जो सदैव काला दिखता है, जो सारे आपतित (Incident) प्रकाश को अवशोषित (Absorb) कर लेता है। R त्रिज्या की गोलाकार सतह 'एक क्षितिज' की तरह हो गई, जहां तक की घटनायें तो दिखती हैं, पर उसके आगे (अन्दर) की कोई घटना नहीं देखी जा सकती। उपर्युक्त पिंड के 'घटना क्षितिज' के अन्दर के सारी स्पेस को लापलासी ब्लैक-होल कहा जाता है क्योंकि इस घटना क्षितिज के अन्दर की किसी भी क्रिया को बाहर से देखा नहीं जा सकता। ब्लैक-होल मात्र वह पिंड नहीं है, परन्तु घटना-क्षितिज के भीतर का समूचा आयतन ब्लैक-होल है।

मूलतः लापलासी ब्लैक-होल की अवधारणा, न्यूटन के सिद्धान्तों पर आधारित होने के बावजूद, किसी भी ब्लैक-होल की संरचना को सही-सही दर्शाती है। कोई भी पिंड जिसका सारा द्रव्यमान M, उसके संगत (Corresponding) घटना- क्षितिज के अन्दर अगर संकुचित ($R < R_s$) हो जाये तो वह एक ब्लैक- होल का सृजन करता है। ऐसे पिंड का घनत्व कितना अधिक होगा इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि यदि पृथ्वी का द्रव्यमान 2 मिलीमीटर से कम त्रिज्या के गोले में संकुचित हो जाये तो पृथ्वी एक ब्लैक होल में परिवर्तित हो जायेगी। इसी प्रकार सूर्य के द्रव्यमान के लिये घटना क्षितिज की त्रिज्या R_s का मान 3 किलोमीटर निकलता है। अर्थात यदि सूर्य का द्रव्यमान 3 कि.मी. से कम त्रिज्या के गोलाकार पिंड में सिमट जाये तो वह भी एक ब्लैक होल बन जायेगा।

(पुस्तक अंश)

सन 1951 में कानपुर में जन्में प्रदीप कुमार श्रीवास्तव वरिष्ठ विज्ञान संचारक और विजिटिंग एसोसिएट हैं। उन्होंने अनेक विज्ञान लेख और पुस्तकें लिखी हैं जिनमें एलिमेंट्री बायोफिजिक्स, मेकेनिक्स, ऑप्टिक्स आदि उल्लेखनीय हैं। पिछली सदी के प्रारंभ से ही क्वांटम-भौतिकी ने पदार्थ व ऊर्जा की मूलभूत रचना व कार्यशैली के एक नये तथा विस्मयकारी सिद्धान्त की नींव डाल दी थी। क्वार्क, ब्लैक-होल, बिग-बैंग, जीन्स, एंटी मैटर आदि शब्द पिछली सदी की सबसे महत्वपूर्ण खोजों के परिचायक हैं। इनका रोचक एवं परिचयात्मक वर्णन, एक झलक, देने का प्रयास सरल सुबोध भाषा में किया गया है।

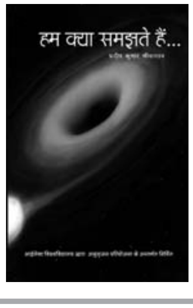

स्वास्थ्य का त्रिभुज

मनीष मोहन गोरे

सैद्धांतिक रूप से किसी जीवधारी की क्रियात्मक या मेटाबोलिक दक्षता के स्तर को स्वास्थ्य कहते हैं। मनुष्यों के संदर्भ में, रोग, चोट या दर्द से मुक्त तन और मन की सामान्य दशा को स्वास्थ्य माना जाता है। स्वास्थ्य का रिश्ता केवल रोग व्याधि तक सीमित नहीं होता है। अगर व्यापकता में देखें तो मनुष्यों के सामाजिक व्यवहार को भी स्वास्थ्य की परिधि में रखा जा सकता है। इसी नजरिए को ध्यान में रखते हुए 1946 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने स्वास्थ्य को इस रूप में परिभाषित किया, 'स्वास्थ्य का अर्थ महज रोगों की अनुपस्थिति नहीं है, बल्कि यह (स्वास्थ्य) शारीरिक, मानसिक और सामाजिक व्यवहार की एक समग्र स्थिति होती है।' शारीरिक, मानसिक और सामाजिक दशाओं के इस संयोग को 'स्वास्थ्य का त्रिभुज' कहते हैं। स्वास्थ्य संबंधी इस संकल्पना को कुछ और विस्तार देते हुए विश्व स्वास्थ्य संगठन के 1986 के ओट्टावा स्वास्थ्य प्रोत्साहन घोषणा-पत्र में कहा गया कि स्वास्थ्य सिर्फ एक दशा नहीं होती है बल्कि दैनिक जीवन के लिए यह एक संसाधन भी है। मनुष्यों में स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से सुरक्षा और निदान तथा अच्छे स्वास्थ्य को प्रोत्साहन देने के लिए अनेक सरकारी-गैर सरकारी संस्थाएं विभिन्न कार्य कर रहे हैं। पशु-पक्षियों के स्वास्थ्य की निगरानी पशु-चिकित्सा विज्ञान (veterinary science) के अंतर्गत की जाती है। 'स्वास्थ्य' या 'स्वस्थ' शब्द का प्रयोग अक्सर ऐसे मामलों में भी किया जाता है जो अजीवित प्रकृति के होते हैं जैसे कि स्वस्थ पर्यावरण, स्वस्थ समुदाय, स्वस्थ गांव आदि। स्वास्थ्य संबंधी देखभाल के अलावा अनेक ऐसे कारक होते हैं जो मनुष्य के स्वास्थ्य पर असर डालते हैं। इन कारकों को स्वास्थ्य के निर्धारक कह सकते हैं। व्यक्ति की पृष्ठभूमि, जीवन-शैली, उसकी सामाजिक-आर्थिक स्थितियां ऐसे ही कुछ कारक हैं।धीरे-धीरे यह बात लोगों के समझ में आने लगी है कि स्वास्थ्य को केवल स्वास्थ्य विज्ञान, दवाओं और उपचार के सहारे ही नहीं सुधारा जा सकता है बल्कि व्यक्ति तथा समाज के बेहतर जीवन-शैली के चयन के द्वारा भी इसे हासिल किया जाना संभव है। स्वास्थ्य के प्रमुख निर्धारक होते हैं - सामाजिक व आर्थिक दशाएं, शारीरिक दशा, व्यक्ति की व्यक्तिगत विशेषताएं तथा व्यवहार। वर्तमान परिदृश्य में दोषपूर्ण जीवन-शैली लोगों के खराब स्वास्थ्य का कारण बन रही है। जीवन-शैली में सुधार लाकर अर्थात व्यायाम, पर्याप्त नींद, शरीर के वनज को संतुलित रखकर, मद्यपान को नियंत्रित करके तथा धूम्रपान को त्यागकर किसी भी व्यक्ति के स्वास्थ्य को सुधारा जा सकता है। अनुकूलन, आत्म प्रबंधन की क्षमता का विकास कर बेहतर स्वास्थ्य प्राप्त किया जाना संभव है।

लोगों की स्वास्थ्य दशा को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण कारक पर्यावरण होता है। यहाँ पर पर्यावरण को व्यापक रूप में व्यक्त किया गया है जिसमें नैसर्गिक पर्यावरण, निर्मित या कृत्रिम पर्यावरण और सामाजिक पर्यावरण समाहित होते हैं। स्वच्छ पानी, हवा, भोजन, रहने को साफ-सुथरा व हवादार घर, सुरक्षित समुदाय तथा सड़कें अच्छे स्वास्थ्य खासकर शिशुओं और बच्चों के स्वास्थ्य के लिए जिम्मेदार होते हैं। हमारे चारों ओर के पर्यावरण के अलावा माता-पिता से प्राप्त वंशानुगत विशेषता भी व्यक्ति की स्वास्थ्य दशा को निर्धारित करते हैं। शारीरिक स्वास्थ्य के साथ-साथ मानसिक स्वास्थ्य का भी जीवन में बड़ी भूमिका होती है। मानसिक स्वास्थ्य काफी हद तक मन की शक्ति और जिजीविषा (जीने की उत्कंठा) पर निर्भर होता है। जीवन की उलझनों, रोजमर्रा के संघर्ष-तनावों से लड़ने, मेहनत व लगन से काम करने तथा समाज के विकास में अपना योगदान देने की हिम्मत मानसिक स्वास्थ्य के द्वारा मिलती है। आज की तनाव भरी भागदौड़ की जिंदगी में इसी उत्तम मानसिक स्वास्थ्य के अभाव में अधिकांश व्यक्ति अवसाद सिजोफ्रेनिया, व्यग्रता और (autism) जैसी बीमारियों की चपेट में हैं। स्वास्थ्य देश-दुनिया के सामाजिक-आर्थिक विकास को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण मुद्दा है इसलिए आरंभ से इसके अध्ययन-अनुसंधान पर विशेष बल दिया जाता रहा है। स्वास्थ्य को विज्ञान की एक महत्वपूर्ण शाखा का

दर्जा दिया गया है। स्वास्थ्य विज्ञान के अंतर्गत दो पहलू होते हैं-पहला मनुष्यों (और जंतुओं) में होने वाली क्रियाओं को समझने के लिए उनके शरीर का अध्ययन व अनुसंधान और उनके स्वास्थ्य से जुड़े मुद्दे; तथा दूसरा स्वास्थ्य में सुधार लाने और बीमारी का इलाज या उससे बचाव करने में उस अध्ययन-अनुसंधान का व्यावहारिक उपयोग करना। स्वास्थ्य विज्ञान के कई महत्वपूर्ण घटक होते हैं जैसे कि जीवविज्ञान, जीव-रसायन, भौतिकी, रोग-निदान, (pharmacology), और चिकित्सा सामाजिकी। व्यावहारिक स्वास्थ्य विज्ञान एक कदम आगे बढ़कर लोगों के स्वास्थ्य में बेहतरी लाने का काम करता है। स्वास्थ्य शिक्षा, जनस्वास्थ्य और जैव-प्रौद्योगिकी जैसे नए क्षेत्रों में पहल के जरिए यह (व्यावहारिक स्वास्थ्यविज्ञान) मानव स्वास्थ्य की बेहतर समझ और उसमें सुधार लाने के प्रयास करते हैं।

स्वास्थ्य विज्ञान के सिद्धांतों और प्रक्रियाओं के आधार पर स्वास्थ्य में सुधार लाने के लिए संगठित हस्तक्षेप पर बल दिया जाता है और इसे चिकित्सा, पोषण, फार्मेसी, सामाजिक कार्य, मनोविज्ञान, व्यावसायिक चिकित्सा (occupational therapy), शारीरिक थिरैपी तथा अन्य स्वास्थ्य देखभाल व्यवसायों में प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति क्रियान्वित करते हैं। चिकित्सक मुख्य रूप से व्यक्तियों के स्वास्थ्य की देखभाल करते हैं जबकि जन स्वास्थ्य के विशेषज्ञ समुदाय और आबादी के स्वास्थ्य को समग्र रूप से देखते हैं। आधुनिक परिवेश में कार्यस्थलों पर स्वास्थ्य एवं नीरोगता कार्यक्रमों को अनेक संस्थाओं, विभागों तथा स्कूलों ने अंगीकार किया है। ऐसा करने का मुख्य उद्देश्य कर्मचारियों और बच्चों के स्वास्थ्य में सुधार लाना है ताकि वे बेहतर प्रदर्शन कर सकें।

जन स्वास्थ्य समाज के सभी तबके के लोगों की विवेकपूर्ण साझेदारी के द्वारा सबके स्वास्थ्य में सुधार लाने की एक प्रक्रिया है। इसमें एक समूची आबादी के विश्लेषण को ध्यान में रखते हुए समुदाय की स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं और चुनौतियों का समाधान तलाशा जाता है। जन स्वास्थ्य की परिभाषा के अंतर्गत कुछ लोगों के एक समूह से लेकर अनेक क्षेत्रों या महाद्वीपों में फैली महामारी आती हैं। रोग-निदान विज्ञान, (epidemiology), जैव सांख्यिकी (biostatistics) तथा स्वास्थ्य सेवाओं को जन स्वास्थ्य की उपशाखाएं माना जा सकता है। इसके अलावा, पर्यावरणीय स्वास्थ्य, सामुदायिक स्वास्थ्य, व्यवहारगत स्वास्थ्य और व्यावसायिक स्वास्थ्य भी जन स्वास्थ्य के अहम क्षेत्र हैं।

व्यापक स्तर पर अगर हम बात करें तो जन स्वास्थ्य का मकसद रोगों से आम जन, समुदाय और पर्यावरण का बचाव करना तथा स्वास्थ्य व अन्य स्वास्थ्य दशाओं को स्वस्थ व्यवहार के द्वारा निगरानी तथा प्रबंधन करना है। स्वास्थ्य से जुड़ी समस्याओं के नियंत्रण को सुनिश्चित करने के लिए और दूसरे शब्दों में कहें तो जन स्वास्थ्य के मकसद को पूरा करने के लिए नीतियों के निर्माण और शैक्षिक कार्यक्रमों में व्यापक अभियान तथा अनुसंधान किए जाते हैं। उदाहरण के लिए पोलियो, हेपेटाइटिस आदि जैसी बीमारियों के वैक्सीन लगाकर तथा एड्स के नियंत्रण हेतु जनजागरूकता फैलाकर अथवा कंडोम वितरण करके लोगों में स्वास्थ्य को लेकर चेतना का प्रसार किया जाता है। बच्चों की पाठ्य पुस्तकों में स्वास्थ्य से जुड़ी प्रामाणिक जानकारियों के समावेश द्वारा बच्चों में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता उत्पन्न की जाती है। समाज में स्वास्थ्य से जुड़ी विसंगतियों को दूर करने और नियंत्रित रखने के लिए सरकार द्वारा जन स्वास्थ्य के अंतर्गत अनेक प्रयास किए जाते हैं। एक देश की सरकार अपने देश के अंदर ऐसे प्रयास में संलग्न रहती है तो वहीं दूसरी ओर डब्लयू.एच.ओ. और यूनेस्को जैसी अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियाँ वैश्विक स्तर पर जन स्वास्थ्य को सुनिश्चित करने के लिए प्रयास करती हैं। मातृ व बाल स्वास्थ्य, स्वास्थ्य सेवा प्रशासन, आपातकालीन कार्यवाही व रोकथाम एवं संक्रामक तथा क्रॉनिक रोगों के नियंत्रण जन स्वास्थ्य प्रणाली के कुछ खास व्यावहारिक पहलू होते हैं।

(पुस्तक अंश)

15 जुलाई 1981 को देवरिया उत्तर प्रदेश में जन्में मनीष मोहन गोरे एम.एस-सी (वनस्पति विज्ञान) शिक्षित होकर विज्ञान प्रसार नोएडा से जुड़े। अब तक 180 विज्ञान लेख, 40 रेडियो वार्ता, 15 रिसर्च पेपर, 24 विज्ञान कथा और 10 साक्षात्कार प्रकाशित। प्रमुख कृतियां विज्ञान कथा का सफर, तीन सौ पच्चीस साल का आदमी, जैव विविधिता संरक्षण, विकासवाद के जनक : चार्ल्स डार्विन, जन्तु व्यवहार तथा सेहत और हम प्रकाशित और चर्चित हैं। 'राजीव गांधी राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान पुरस्कार' से सम्मानित मनीष मोहन गोरे महत्वपूर्ण युवा विज्ञान लेखक हैं। प्रस्तुत पुस्तक में स्वास्थ्य संबंधी बातों की विस्तार से चर्चा की है। नागरिकों के स्वास्थ्य का सीधा संबंध देश की उन्नति से जुड़ा होता है। भारत के पास स्वास्थ्य और चिकित्सा विज्ञान की एक समृद्ध विरासत है। पुस्तक का मुख्य उद्देश्य जन सामान्य को स्वास्थ्य के महत्व, विभिन्न रोगों के सामान्य स्वरूपों तथा उनके कारणों के संबंध में परिचय देना और उन्हें जागरूक बनाना है।

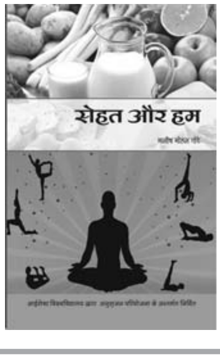

पृथ्वी पर एक ही महासागर था

बजरंग लाल जेठू

पृथ्वी की उत्पत्ति के बारे में अनेक धारणाएं हैं, पर अधिकतर वैज्ञानिकों के अनुसार करीब 46,000 लाख वर्ष पहले पृथ्वी का उद्भव हुआ। आरम्भ में यह आग का एक दहकता गोला थी और इसका वायुमण्डल आज से बहुत भिन्न था। जल और जीवन का कहीं नामोनिशान नहीं था। हम जानते हैं कि अंतरिक्ष का तापमान शून्य से भी कम है, जिसके कारण वातावरण बहुत ही ठण्डा है। इतने कम तापमान के कारण यह आग का गोला धीरे-धीरे ठण्डा होता गया एवं इसने पृथ्वी का रूप ले लिया। पृथ्वी पर महासागरों की उत्पत्ति एक तरह से पृथ्वी पर जल की उत्पत्ति की ही कहानी है, जिसके बारे में हम पूर्व प्रकरण में भी पढ़ चुके हैं। महासागरों की उत्पत्ति पर भी वैज्ञानिकों के अलग-अलग कई मत हैं। कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि मूलतत्त्व ग्रहों के अभिवृद्धि के समय धूल से भरे कण एकत्रित होकर अत्यधिक दाब के कारण चट्टानों में परिवर्तित हुए। वाष्प से लदी ये चट्टानें ज्वालामुखी के कारण पिघली। यह वाष्प जो चट्टानों से निकली, वातावरण के कम तापमान के कारण पानी में परिवर्तित होकर पृथ्वी पर बर्फ के रूप में जमा हुई, जो पुनः पृथ्वी के तापमान से प्रभावित होकर पिघली व पानी में परिवर्तित होकर निचले भाग में एकत्रित होकर समुद्र का रूप लिया।

वैज्ञानिकों के कुछ अन्य मत इस प्रकार हैं कि मूलतत्त्व ग्रहों के अभिवृद्धि के दौरान पृथ्वी जो गैसीय सिलिका से घिरी थी, धीरे-धीरे सौरमण्डल में अधिक दाब व कम तापमान के कारण ठोस चट्टानों के रूप में परिवर्तित हुई। अंततोगत्वा सौर नेबुला के मौलिक घटक, विशेष रूप से हाइड्रोजन, हीलियम एवं ऑक्सीजन इत्यादि गैसों ने तेज हवाओं एवं कम तापमान की वजह से वायुमण्डल में उथल-पुथल उत्पन्न किया। वायुमण्डल में इन मौलिक परिवर्तनों के कारण जब पृथ्वी पर अभिवृद्धि हुई, वायुमण्डल के कम तापमान व पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के कारण ये गैस वाष्प के रूप में एकत्रित हुई। अंत में वायुमण्डल के कम तापमान से टकराकर यही वाष्प पानी में परिवर्तित हुई। कई मतों के अनुसार वायुमण्डल में गैसीय परिवर्तन के कारण वाष्प कम तापमान से पानी में परिवर्तित हुई, जिससे वर्षा शुरू हुई। कई हजारों वर्ष तक लगातार मूसलाधार वर्ष होती रही। इस प्रकार इस वर्षा के पानी ने पृथ्वी की निचली सतह पर एकत्रित होकर विशाल महासागर का रूप ले लिया। मूल बात यह है कि धरती के धीरे-धीरे ठण्डा होने की प्रक्रिया में विभिन्न रासायनिक प्रतिक्रियाओं से वायुमण्डल में जलवाष्प की उत्पत्ति हुई। लाखों वर्ष बाद जब पृथ्वी की सतह का तापमान 100 डिगी सेल्सियस से कम हो गया तो वाष्प संघनित होकर पानी की बूंदों के रूप में पृथ्वी पर आया। इस क्रिया से पृथ्वी तेजी से ठण्डी होने लगी और पृथ्वी की सतह के अधिकांश भाग पर जल ही जल हो गया, जिसे महासागर कहा जाता है। हमारी पृथ्वी पर आज की तरह के अनेक महासागर और महाद्वीप पहले नहीं थे। लगभग 20 करोड़ वर्ष पहले पृथ्वी की सतह केवल एक भूमि का टुकड़ा अर्थात् प्राचीन सुपर महाद्वीप था, जिसे पैनजिया कहा जाता है। यह उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव तक फैला था। पृथ्वी पर उस वक्त एक ही महासागर था, जिसे पैंथलासा कहा जाता है। पैनजिया के_उत्तरी और दक्षिणी हिस्से टेथिस नामक समुद्र से जुड़े थे। पैंथलासा का विस्तार 220 डिग्री था। पैंथलासा महासागर प्राचीन सुपर महाद्वीप पैनजिया और टेथिस सागर को घेरे हुए था।

(पुस्तक अंश)

बजरंग लाल जेठू का जन्म 10 अगस्त 1958 को हुआ। आपने एम.एस-सी एमएड तक शिक्षा प्राप्त की। आपकी चर्चित कृतियों में मरू-प्रदेश की वनस्पतियाँ, हमारे वृक्ष, जल एवं वायु के पर्यावरणीय संप्रत्यय, ठोस अपशिष्ट के पर्यावरणीय पक्ष, हमारी जन परंपराएं, हमारी जल संस्कृति के विलुप्त होते अध्याय, पर्यावरण त्रयी, हमारी जल परम्पराएं, प्रारंभिक जैव-प्रौद्योगिकी, माध्यमिक जैव-प्रौद्योगिकी, परिचयात्मक जैव प्रौद्योगिकी, विद्युत उत्पादन की पर्यावरण-मित्र तकनीकें, आपदा विज्ञान एवं आपदा-प्रबंधन, राजपूत की बेटी, थारी म्यारी एवं कहवतां किकर चाली (राजस्थान) शामिल हैं। मेदनी पुरस्कार, मेघनाथ साहा पुरस्कार, जगदीश चंद्र बोस हिन्दी लेखन पुरस्कार, हिन्दी सेवी पुरस्कार आदि से नवाजे गये बजरंगलाल जेठू की यह पुस्तक सागर की जुबानी है जो अपने प्रवाह, धारा, चक्र, मानसून, सुनामी, अलनिनो, जीवजगत्-वनस्पति व जन्तु, समुद्री घास, मैन्ग्रोव, शैवाल, नमक, पेट्रोलियम, मूंगा आदि के बारे स्वयं बोलता है। बोलते-बोलते सागर उदास हो जाता है जब हम उसमें हर तरह का कचरा और गंदगी दफनाते हैं।

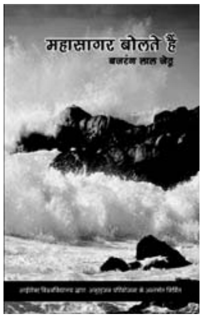

प्राकृतिक संसाधनों का दोहन खतरनाक

डॉ.सुमन गुप्ता

मानव जीवन की आवश्यकताएं प्राकृतिक संसाधनों से पूरी होती हैं। परन्तु अतिदोहन के कारण प्राकृतिक संसाधन समाप्त हो रहे हैं। यदि इसी तरह प्राकृतिक संसाधनों का अतिदोहन होता रहा तो भावी पीढ़ी के लिए कुछ नहीं बचेगा। प्राकृतिक संसाधनों के महत्व को समझना और उनका संरक्षण करना अत्यन्त जरूरी है। पृथ्वी प्राकृतिक संसाधनों से पटी पड़ी है। जीव प्राकृतिक संसाधनों पर जन्म से ही निर्भर हो जाता है। बल्कि यह कहें कि उसके बिना जीव के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती। मानव सभी जीवों में अकेला ऐसा सचेतक प्राणी है जो प्राकृतिक संसाधनों का अपनी उपयोगिता के अनुसार उपभोग करता है और अपनी इसी क्षमता के कारण उनके संरक्षण के प्रति भी उत्सुक होता है। मनुष्य ने प्राकृतिक संसाधनों का जब से अतिदोहन करना शुरू किया तब से ढेर सारी पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न होती गईं और धीरे-धीरे पर्यावरण संतुलन का संकट उत्पन्न हो गया। प्रकृति में उपलब्ध सभी वस्तुएं प्राकृतिक साधन हैं। जब ये प्राकृतिक साधन मानव और दूसरे जीवों के लिए उपयोगी हो जाते हैं तो ये प्राकृतिक संसाधन कहलाते हैं। प्राकृतिक संसाधन को उपलब्धता के हिसाब से मुख्यतः दो भागों में बांटा गया है।

अक्षय प्राकृतिक संसाधन : ऐसे प्राकृतिक संसाधन जिनका पृथ्वी पर भंडार असीमित है और ये लगातार मानव के उपभोग करने के बाद भी भविष्य में समाप्त नहीं होंगे, ऐसे प्राकृतिक संसाधन अक्षय प्राकृतिक संसाधन कहलाते हैं। उदाहरण-सूर्य ऊर्जा, वर्षा, ज्वारीय और लहरीय शक्ति, भूतापीय ऊर्जा और पवन ऊर्जा। क्षय प्राकृतिक संसाधन : ऐसे प्राकृतिक संसाधन जिनका पृथ्वी पर भंडार सीमित हैं और ये लगातार मानव के उपभोग करने से शीघ्रता से समाप्त हो जाएंगे, क्षय प्राकृतिक संसाधन कहलाते हैं। पुनः उत्पत्ति के आधार पर इन्हें दो भागों में बांटा जा सकता है-

नवीनीकरणीय प्राकृतिक संसाधन- जो क्षय संसाधन किसी न किसी विधि के द्वारा पुनः उत्पन्न होते हैं उन्हें नवीनीकरणीय प्राकृतिक संसाधन कहते हैं। जैसे-पौधे और जन्तु की मृत्यु होती है परन्तु ये समाप्त नहीं होते हैं। जनन के द्वारा इनकी नई पीढ़ी का विकास होता रहता है। निम्न विधियों से प्राकृतिक संसाधन पुनः उत्पन्न होते हैं- जैविक प्राकृतिक संसाधन जनन के द्वारा पुनः उत्पन्न होते हैं। जैसे- जन्तु और पौधे। कुछ प्राकृतिक संसाधन विभिन्न चक्रों के द्वारा पुनः उत्पन्न होते हैं। जैसे- जल चक्र, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, कार्बनडाइ ऑक्साइड और कार्बन चक्र। कुछ प्राकृतिक संसाधन प्रतिस्थापन के द्वारा पुनरू उत्पन्न होते हैं। जैसे- मृदा, बंजर भूमि। सही प्रबंधन के द्वारा बंजर भूमि, उपयोगी भूमि में प्रतिस्थापित हो जाती और उपयोगी भूमि गलत प्रबंधन के द्वारा बंजर भूमि में प्रतिस्थापित हो जाती है।

(पुस्तक अंश)

डॉ. सुमन गुप्ता का जन्म 24 फरवरी 1969 को इलाहाबाद में हुआ। आपने पर्यावरण विज्ञान में पी.एच-डी की। आप वनस्थली विद्यापीठ राजस्थान में सहायक प्राध्यापक है। अब तक आपके 16 पेपर और 10 महत्वपूर्ण लेख विज्ञान पत्रिकाओं और अखबारों में प्रकाशित हुए हैं। अनुसृजन शृंखला के अंतर्गत डॉ. सुमन गुप्ता ने पर्यावरण और मानव जीवन पुस्तक का लेखन किया है। आज विश्व की प्रमुख समस्या पर्यावरण ह्रास, बढ़ता प्रदूषण और पारिस्थितिक असंतुलन है। पर्यावरणीय प्रदूषण पर नियंत्रण करने एवं पारिस्थितिक संतुलन को बनाए रखने के लिए पर्यावरण संरक्षण बहुत जरूरी है। इस पुस्तक का मुख्य उद्देश्य लोगों को पर्यावरण के प्रति जागरूक करना है।

प्राचीन सभ्यताओं में सौन्दर्य - इतिहास

डॉ. बबीता अग्रवाल

सौंदर्य प्रसाधनों के उपयोग का इतिहास शायद उतना ही प्राचीन है जितनी कि मानव सभ्यता। मानव सभ्यता के शुरुआती दौर में लगभग एक लाख वर्ष पूर्व अफ्रीका के मध्य पाषाण युग में शरीर पर चित्रकारी के साक्ष्य मिले हैं यहाँ मेहंदी एवं काजल तथा कोहल का उपयोग तभी से हो रहा है। भारत में सौंदर्य प्रसाधनों के प्रयोग के प्रथम पुरातात्विक साक्ष्य के रूप में सिंधुघाटी की सभ्यता जो 2500 से 1750 ई.पू. मानी जाती है में मोहन जोदड़ो में खुदाई के दौरान सिंधुवासियों द्वारा उपयोग की जाने वाली लिपस्टिक मिली। भारत में प्राचीन काल से ही काजल का उपयोग आंख संवारने में किया जाता था तथा मेहंदी का उपयोग हाथ-पांव सजाने एवं बाल रंगने में किया जाता था। उत्तरी अफ्रीकी संस्कृति में भी मेहंदी का महत्व था।

विश्व के विभिन्न देशों के साहित्य एवं सांस्कृतिक इतिहास के अध्ययन से पता चलता है कि भिन्न-भिन्न अवसरों पर प्रगतिशील नागरिकों द्वारा सौंदर्य प्रसाधनों एवं इत्र सुगंधियों का उपयोग शारीरिक स्वास्थ्य और त्वचा की सौंदर्य वृद्धि के लिये किया जाता रहा है। भारत के साथ-साथ मिस्र, रोम, चीन, जापान, ग्रीस, सीरिया, ईरान आदि देशों के प्राचीन इतिहास से पता चलता है कि सौंदर्य प्रसाधनों का उपयोग एवं उन्हें बनाने की विधियाँ प्राचीन काल से ही प्रचलन में हैं। प्राचीन मिस्र में सौंदर्य प्रसाधनों का दैनिक जीवन में प्रयोग वहाँ के निवासियों को अत्यन्त प्रिय था। साक्ष्य बताते हैं कि 7000 वर्ष पूर्व मिस्र वासी पिसे हुये एन्टीमनी एवं तांबे के हरे अयस्क मैलेकाइट का उपयोग पलकों को रंगने के लिये करते थे। प्राचीन मिस्र के शासक फराओ सुगंधित तेल का उपयोग अपने बालों को सँवारने में करते थे। हजारों वर्ष पूर्व मिस्र के सम्राट एवं सम्राज्ञियों के शवों को विभिन्न रसायनों के लेपन से ममी का रूप देकर विभिन्न प्रकार की सुगंध एवं सौंदर्य प्रसाधनों के साथ ताबूत में गाड़ा गया था जो आज भी ठीक अवस्था में पाये गये हैं एवं इन शवों के रूप और सौंदर्य में किसी भी प्रकार की गिरावट नहीं पाई गई। हजारों वर्ष पुरानी इन ममीयों के रूप-सौंदर्य में कोई दोष न पाकर आज का वैज्ञानिक जगत भी आश्चर्यचकित है कि उस समय मिस्र में सौंदर्य प्रसाधनों एवं सुगंधियों का विकास इस चरम सीमा तक पहुँचा हुआ था। मिस्र की महारानी क्लियोपेट्रा के अप्रतिम सौंदर्य का राज उनके लिये विशेष प्रकार से तैयार की गई मेकअप सामग्री थी। वे स्वयं सौंदर्य प्रसाधनों एवं सुगंध शास्त्र की ज्ञाता एवं आविष्कारक मानी जाती हैं। कहा जाता है कि महारानी क्लियोपेट्रा की लिपस्टिक एक विशेष प्रकार के गहरे लाल कीड़े से बनाई जाती थी एवं इसमें चीटियों के अंडे भी मिलाये जाते थे। पुरातात्विक सबूत पाये गये हैं कि मिस्र में अरण्डी के तेल का उपयोग त्वचा के सुरक्षात्मक बाम के रूप में किया जाता था।

ग्रीक फिजिशियन क्लॉडियस गेलेन ने द्वितीय शताब्दी में कोल्डक्रीम के आविष्कार का दावा किया। रोम में सौंदर्य प्रसाधनों का आविष्कार विशेष रूप से दासियों के लिये किया गया था। इन दासियों को यहाँ 'कासमेट' कहकर बुलाया जाता था। रोमन लोग मधुमक्खी के छत्ते का मोम (beewax), जैतून का तेल एवं गुलाबजल मिलाकर बनाई गई क्रीम का उपयोग अपनी त्वचा की सुरक्षा के लिये करते थे।

पर्शिया (ईरान) में सौंदर्य प्रसाधन उपयोग में लाये जाते थे। यहाँ आँख को सजाने के लिये सुरमे उपयोग प्राचीनकाल से ही हो रहा है। सुरमा एक काला पाउडर है जो आँख की कोरों को गहरा रंग देता है। अरब आदिम जातियों द्वारा इस्लाम अपना लिये जाने से यह क्षेत्र इस्लामिक शासन के अन्तर्गत आ गया एवं इस्लामिक कानून में सौंदर्य प्रसाधनों के उपयोग के कड़े नियम हैं।

चीन में लोग विभिन्न रंग अपने नाखूनों पर लगाते थे। ये रंग वहाँ के विभिन्न सामाजिक वर्गों का प्रतिनिधित्व करते थे। चू राजवंश के लोग सोने-चाँदी के रंग के निशान लगाते थे। उनके बाद आने वाला वर्ग लाल और काले रंग का निशान लगाता था। जापान में नर्तकियाँ सनफ्लावर के फूल को मसलकर अपने होठों को रंगती थीं तथा इसकी पंखुड़ियों से अपने आँखों के किनारों को सजाती थीं।

योरोप में मेकअप को चर्च द्वारा अनैतिक समझा जाता था, लेकिन योरोप में हुये धर्म सुधार आंदोलन और औद्योगिक क्रांति के बाद लोगों की इस धारणा में बदलाव आया। वहाँ उच्चवर्ग की महिलायें अपनी त्वचा को संवारने के लिये सफेद सीसे (लेड कार्बोनेट) का इस्तेमाल करतीं थीं। इंग्लैंड की महारानी एलिजाबेथ प्रथम भी इसका उपयोग करती थीं और इनसे प्रभावित होकर इंग्लैण्ड में युवावर्ग ने इसके भारी दुष्प्रभावों को नजरअंदाज करते हुये इसका जमकर प्रयोग किया।

भारत युग युगांतर से धर्म-प्रधान देश रहा है। यहाँ सौन्दर्य प्रसाधन, सुगंधियों आदि की रचना करना एवं उपयोग करना उत्तेजक पदार्थ न मानकर समाज कल्याण एवं धर्म प्रेरणा का साधन समझा जाता रहा है। आर्य संस्कृति में जिस प्रकार पंचमहायज्ञ एवं वर्णाश्रम धर्म की मर्यादा का पालन प्रत्येक सद्गृहस्थ के लिये अनिवार्य था उसी प्रकार सौंदर्य प्रसाधन एवं गंध शास्त्र का भी उनके दैनिक जीवन में अत्यन्त महत्व था। वैदिक साहित्य, महाभारत, बृहत्संहिता, सुश्रुत, निघंटु, अग्निपुराण, मार्कंडेय पुराण, शुक्रनीति, कौटिल्यकृत अर्थ शास्त्र, सारंगधर पद्धति, ललितविस्तार, भरतनाट्य शास्त्र, अमरकोष आदि में विभिन्न प्रकार के सौंदर्य प्रसाधनों एवं सुगन्धों को बनाने एवं प्रयोग करने का वर्णन पाया जाता है। इन ग्रंथों में विभिन्न सौंदर्य प्रसाधनों जैसे क्रीम, पाउडर, तेल, सुगंध, माउथवॉश इत्यादि के बनाने की विधियों का विस्तृत वर्णन दिया गया है। महाभारत काल में भी लोग सौंदर्य शास्त्र में पूरी तरह निपुण थे एवं प्रसाधन तैयार करने के लिये प्रसाधक एवं प्रसाधिकायें जिन्हें हम आज ब्यूटिशियन एवं हेयर ड्रेसर कहते हैं नियुक्त होते थे।

मौर्य एवं गुप्तवंश के राज्यकाल में भी सौंदर्य प्रसाधन एवं सुगंधियों का उपयोग जीवन का आवश्यक अंग था। महिलायें विभिन्न तेलों से शरीर की मालिश करवातीं थीं एवं तरह-तरह के उबटनों का प्रयोग अपनी त्वचा को सुन्दर चमकदार रखने के लिये करतीं थीं। बादाम के तेल एवं पिसे बादाम का प्रचुर मात्रा में प्रयोग होता था। केशों में भी सुगंधित तेल का प्रयोग होता था एवं सफेद बालों को काला करने की भी प्रथा थी। ओठों को लाल करने के लिये पान, रक्तचंदन आदि का प्रयोग किया जाता था। धार्मिक अवसरों, विवाह तथा मंगल उत्सवों में सुगंधित पदार्थों का प्रचुर मात्रा में उपयोग किया जाता था।

मारकोपोलो एवं इंग्लैंड, स्पेन, बेलजियम, स्कैंडेनेविया आदि विदेशों से आये यात्रियों ने अपने लेखों में भारत में उपयोग में लाये जाने वाले सुगंधित पदार्थों एवं सौंदर्य प्रसाधनों के बारे में लिखा है एवं अपने देशों में जाकर प्रचार भी किया। ये विदेशी यात्री भारत से सैंकड़ों सुगंधित वृक्षों, पौधों एवं फलों के बारे में जानकारी लेकर गये। जैसे - विभिन्न प्रकार की लकड़ियाँ जिनसे रंग निकाला जा सकता है, पेड़ों की सुगंधित छालें जो सौंदर्य प्रसाधन बनाने में प्रयुक्त होती थीं आदि। उस समय के भारतीय नागरिक शरीर के विभिन्न अंगों को सुंदर बनाने के लिये सौंदर्य प्रसाधनों के साथ-साथ अपने आहार पर भी विशेष ध्यान रखते थे।

(पुस्तक अंश)

4 नवम्बर 1966 को इंदौर में जन्मी डॉ. बबीता अग्रवाल इलाहाबाद विश्वविद्यालय में सीनियर असिस्टेंट प्रोफेसर के पद पर कार्यरत हैं। एम.एस-सी (कार्बनिक रसायन) और डी. फिल.उपाधि प्राप्त डॉ. बबीता अभी तक 30 से अधिक शोध पत्र एवं लेख लिखे है। 'सुगंधित पौधे' आपकी प्रकाशित कृति है। विज्ञान कला और साहित्य की त्रिवेणी : डॉ. विपिन कुमार अग्रवाल का सह लेखन किया। आपको 'भारत विकास परिषद स्वर्ण जयंती सम्मान' एवं 'एडू शाइन 2014' सम्मान प्राप्त है।

प्रस्तुत पुस्तक का उद्देश्य विभिन्न सौंदर्य प्रसाधनों के निर्माण तथा उनमें उपस्थित विभिन्न रासायनिक यौगिकों एवं प्राकृतिक पदार्थों के बारे में पाठकों को अवगत कराना है। लेखिका का मंतव्य है कि यथासंभव प्राकृतिक पदार्थ युक्त सौंदर्य प्रसाधनों का उपयोग करना चाहिए जो स्वास्थ्य एवं सौंदर्य के लिये लाभदायक होता है।

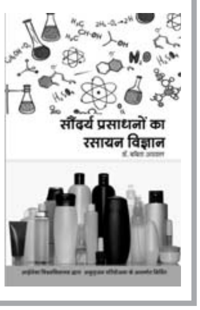

धूमकेतु सौर मंडल के जलवाहक

नवनीत कुमार गुप्ता

महासागर सदैव से मानव को प्रभावित करते रहे हैं। इसीलिए विभिन्न संस्कृतियों एवं धर्मों में उनकी उत्पत्ति के बारे में अनेक कथाएं प्रचलित हैं। कुछ भारतीय पौराणिक कथाओं में सात समुद्रों का वर्णन है, जिसमें दुध और शहद के समुद्र भी थे। एक अन्य धार्मिक विचार के अनुसार ईश्वर ने पृथ्वी और स्वर्ग की रचना सात दिनों में की। और सातवें दिन महासागर की रचना की। हमारे देश में देव और दानवों के सागर मंथन की भी एक कहानी प्रचलित है। सागर मंथन के बाद मिले रत्नों को दानवों ने लिया, अमृत का सेवन कर देवों को चिर यौवन और अमरत्व मिला और महादेव शिव ने संसार की भलाई के लिए विष का पान किया और 'नीलकण्ठ' कहलाए।

एक अन्य प्रौराणिक कथाओं में परशुराम द्वारा समुद्र को काफी पीछे धकेल दिया था। फिर महासागर से मुक्त हुई भूमि पर एक नगर बसाया जिसने काफी विकास किया। इसी प्रकार एक अन्य कथा में अगस्त्य ऋषि ने सारे समुद्र के पानी को पी लिया था जिससे वहां छिपे असुरों का नाश हो सके। एक अन्य कथा में वानर सेना द्वारा समुद्र पर राम-सेतु का निर्माण किया गया था जिससे वो समुद्र पार कर श्रीलंका तक पहुंच सकें। यह तो था पौराणिक कहानियों में समुद्र का जिक्र। लेकिन आज की मान्यताएं कल से अलग हैं। आज महासागर को एक प्रमुख भौगोलिक इकाई के रूप में माना जाता है। इस दुनिया के महासागरीय हिस्से का क्षेत्रफल करीब 36,10,00,000 वर्ग किलोमीटर है यानि पृथ्वी की कुल सतह का करीब 71 प्रतिशत सागरों से घिरा है। महासागर की औसत गहराई करीब 3,730 मीटर होती है और इसका कुल आयतन करीब 1,347,000 मिलियन घन किलोमीटर है। असल में हमारी पृथ्वी ही सौर मण्डल परिवार का अकेला ऐसा ग्रह है, जिस पर जल उपलब्ध है और वह भी असीम मात्रा में।

मानव के लिए पृथ्वी और महासागरों का अस्तित्व में आना हमेशा से पहेली बना रहा है। महासागरों की उत्पत्ति को समझने से पहले पृथ्वी के विकास को समझ लेना आवश्यक है। पृथ्वी सौर मंडल के आठ ग्रहों में से एक ग्रह है। एक आधुनिक मान्य सिद्धांत के अनुसार, करीब 4.6 से 5 अरब वर्ष पहले, हमारे सौर मंडल की रचना गैस और धूल के घूमते बादलों के रूप में हुई। सौर मंडल का आरंभिक द्रव्यमान सूर्य के वर्तमान द्रव्यमान की तुलना में करीब 10 से 20 प्रतिशत अधिक था। गुरुत्व बल के कारण इन आरंभिक बादलों में उपस्थित अणुओं के पास-पास आने के कारण इन बादलों का घनत्व अधिक हो गया। तब ये घूमते चपटे बादल मध्य भाग से उभरने लगे जिससे सूर्य का जन्म हुआ। समय बीतने पर सूर्य के आसपास, चकती के पदार्थ धूल जैसे ठोस पदार्थों में बदल, ग्रहों के रूप में अस्तित्व में आए।

पृथ्वी की रचना के बाद से ही इसमें अनेक महापरिवर्तन होते रहे हैं, जिनके कारण पृथ्वी वर्तमान स्वरूप में पहुंची है। आज हमें दिखाई देने वाले महाद्वीप और महासागर सदैव ऐसे नहीं रहे हैं, वे लाखों-करोड़ों वर्षों से गति करते रहे हैं। आज हम जिस पृथ्वी को देखते हैं उसकी तुलना में आरंभिक पृथ्वी बहुत अलग थी। तब न महासागर थे और न ही वायुमंडल में ऑक्सीजन थी। और उस समय पृथ्वी पर कोई जीवित प्राणी उपस्थित नहीं था। सौरमंडल के निर्माण के समय से ही पृथ्वी पर आकाश से लगातार बरसने वाली चट्टानें और अन्य पदार्थ ही उपस्थित थे।

पदार्थों की इस बमबारी में रेडियोसक्रिय क्षय से उत्पन्न ताप और संकुचन के दबाव से पृथ्वी बहुत गर्म और पूर्णतः पिघली अवस्था में थी। आरंभिक समय में भारी पदार्थ पृथ्वी के केन्द्र की ओर जा रहे थे और दूसरी तरफ़ हल्के पदार्थ ऊपर सतह पर आ रहे थे। इस प्रकार पृथ्वी की विभिन्न पर्तो का निर्माण हुआ। पृथ्वी पर महासागरों के विकास और उनमें जल की उपस्थिति के संबंध में अनेक विचार प्रचलित हैं। एक विचार के अनुसार पृथ्वी का आरंभिक वायुमंडल सौर निहारिका की गैसों विशेषकर हाइड्रोजन और हीलियम जैसी हल्की गैसों से बना था। लेकिन सौर हवाओं और पृथ्वी की अपनी गर्मी के कारण शायद तब वायुमंडल स्थिर नहीं रह पाया था। जब पृथ्वी ठंडी होकर सिकुड़ी तब यह गुरुत्वीय आकर्षण के कारण जलवाष्प सहित वायुमंडल को रोके रखने में समर्थ हो सकी। इसकी सतह तेजी से ठंडी हुई और अगले 10 करोड़ वर्षों के दौरान ठोस भूपटल (क्रस्ट) का निर्माण हुआ।

एक अन्य धारणा के अनुसार करीबन 3.8 से 4 अरब वर्ष पहले धरती पर क्षुद्रग्रहों की भारी बमबारी हुई। इस घटना के फलस्वरूप भूपटल से वाष्प मुक्त होने के साथ ज्वालामुखियों से गैसें भी मुक्त हुईं, जिससे वायुमंडल का निर्माण हुआ। इस वायुमंडल में मुख्यतया कार्बन डाइऑक्साइड और कार्बन मोनोऑक्साइड और जलवाष्प के साथ सूक्ष्म मात्रा में मिथेन और अमोनिया आदि गैसें भी विद्यमान थी। इस अवस्था में पृथ्वी पर मुक्त ऑक्सीजन वायुमंडल में शायद हाइड्रोजन या सतह के खनिजों के साथ संयुक्त रूप से थी। तापमान के कम होने पर बूंदों से बादल बने और संघनन के द्वारा बारिश हुई। कुछ स्थानों पर सतह के बहुत गर्म होने के कारण वहां बारिश होने के साथ ही जल पुनः जलवाष्प में परिवर्तित हो जाता था।

समय बीतने पर धरती की सतही चट्टानों ने पहली बारिश का अधिकतर जल अवशोषित कर लिया था। आरंभिक मूसलाधार बारिश लगातार होती रही और बहुत विशाल क्षेत्र में संग्रहित जल ने पहले सागर का आकार लिया। कुछ वैज्ञानिकों के अनुसार धूमकेतु हमारे सौरमंडल में जल के वाहक रहे हैं। जब अधिकतर ग्रह और विशेषकर पार्थिव ग्रहों का निर्माण हो रहा था जब उनके बहुत गर्म होने के कारण उनमें आणविक अवस्था की तो संभावना ही नहीं की जा सकती। हालांकि बाहरी क्षेत्र में जल की मात्रा रखने वाले आर्थों बादल नामक धूमकेतुओं की रचना हो गई थी। लगभग पचास प्रतिशत धूमकेतुओं में बर्फ उपस्थित है, यानि वे जल की मात्रा रखते है। लेकिन प्रश्न यह उठता है कि धूमकेतुओं का जल पृथ्वी तक कैसे पहुंचा। सौर मण्डल के आरंभिक दिनों में जब पृथ्वी शैशव अवस्था में थी तब अनेक आद्य ग्रह, चट्टानें, धूमकेतु, लगातार प्रत्येक ग्रह से टक्करा रहे थे। चांद और बुध के हमें दिखाई देने वाले क्रेटर यानि गड्ढे भी इन घटनाओं का ही परिणाम हैं। केवल विशाल धूमकेतुओं द्वारा ही धरती पर जल नहीं लाया गया बल्कि छोटे आकार के धूमकेतुओं द्वारा भी धरती पर जल आया। वे प्रतिदिन धरती पर जल की मात्रा लाते थे। यह सिद्धांत महासागरों के जन्म के अनेक रोचक सिद्धांतों में से एक है। अन्य सिद्धांत जैसे पृथ्वी के आन्तरिक भाग से जलवाष्प के मुक्त होने का है।

एक अन्य सिद्धांत के अनुसार जल हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के मिलने से बनता है। आरंभ में यह हाइड्रोजन और ऑक्सीजन ज्वालामुखीय गतिविधि से बनें सुराखों से बाहर आया। वाष्प के रूप में बाहर निकले हाइड्रोजन और ऑक्सीजन ने अन्य गैसों के साथ मिलकर बादल का रूप ले लिया और ऊपरी ठंडे वायुमंडल में जमा होने लगे। बादल बने और धरती पर बरसे, लेकिन हमारी पृथ्वी इतनी गर्म थी कि बारिश का जल पृथ्वी की गर्मी से उबलकर फिर वाष्प बन गया। लेकिन यह प्रक्रिया करोड़ों सालों तक चलती रही और धीरे-धीरे हमारी पृथ्वी ठंडी होने लगी। जब हमारी पृथ्वी ठंडी होने लगी, तब बादलों से बरसे जल का जमाव भी कई जगहों पर होने लगा और महासागर अस्तित्व में आए। विभिन्न महासागरों और उनमें होने वाली भूगर्भीय हलचल को समझने के लिए हमें पृथ्वी की आंतरिक संरचना को समझना भी जरूरी है।

(पुस्तक अंश)

नवनीत कुमार गुप्ता ने एम.एससी. विज्ञान संचार तक शिक्षा ग्रहण की और विज्ञान प्रसार से संबद्ध हुए। आपका जन्म 15 अगस्त 1982 को पचौर जिला रायगढ़ में हुआ। अब तक आपने जैव विविधता संरक्षण एवं जलवायु परिवर्तन तथा पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता संबंधी 10 पुस्तकें लिखीं। साथ ही 11 पुस्तकों का संपादन तथा अनेक लेखों का अनुवाद किया। राजीव गांधी ज्ञान-विज्ञान लेखन पुरस्कार, मेदनी पुरस्कार, राजभाषा पुरस्कार, श्रीतरूशनपाल पाठक स्मृति बाल विज्ञान पुरस्कार से सम्मानित नवनीत कुमार गुप्ता ने महासागरों की विशेषताओं की संक्षिप्त जानकारी के साथ पृथ्वी ग्रह को सुन्दर और जीवनदायी ग्रह बनाए रखने में इनकी पर प्रकाश डाला गया है। महासागरों के अनोखेपन से परिचित कराने के साथ ही महासागरों एवं सागरों को प्रदूषणरहित बनाए रखने की आवश्यकता पर ध्यान आकर्षित किया गया है।

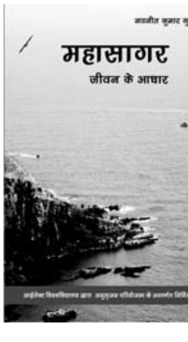

परिस्थितिक तंत्र पर निर्भरता

राजेन्द्र शर्मा 'अक्षर'

जलमग्न अथवा आर्द्रभूमि को वैटलेंड कहते हैं। प्राकृतिक अथवा कृत्रिम, स्थायी अथवा अस्थायी, पूर्णकालीन आर्द्र अथवा अल्पकालीन, स्थिर जल अथवा अस्थिर जल, स्वच्छ जल अथवा अस्वच्छ, लवणीय, मटमैला जल-इन सभी प्रकार के जल वाले स्थल वैटलेंड के अन्तर्गत आते हैं। समुद्री जल, जहाँ भाटा-जल की गहराई छः मीटर से अधिक नहीं हो, भी वैटलेंड कहलाता है। इस प्रकार जलयुक्त दलदली वन भूमि दलदली झाड़ी युक्त स्थल घास युक्त दलदल, जल प्लावित घास क्षेत्र खनिज युक्त आर्द्रस्थल, सड़े गले पेड़-पौधों के जमाव वाली आर्द्रभूमि दलदल, नदी, झील, बाढ़ के क्षेत्र, बाढ़ वाले वन, समुद्री किनारे के झाड़ी युक्त स्थल, डेल्टा, धान के खेत, मूंगे की चट्टानों के क्षेत्र, बाँध, नहर, झरने, मरूस्थली झरने, ग्लेशियर, समुद्री तट ज्वार भाटे वाला स्थल आदि सभी आर्द्रक्षेत्र वैटलेंड कहलाते हैं। मानव कृत कृत्रिम जल स्थल जैसे मत्स्य पालन, जलाशय आदि भी वैटलेंड के अन्तर्गत हैं।

प्रत्येक वैटलेंड का अपना पर्यातंत्र होता है अर्थात् पारिस्थितिक तंत्र होता है। जैव विविधता होती है, वानस्पतिक विविधता होती है। ये वैटलेंड जलजीवों, पक्षियों, आदि प्राणियों के आवास होते हैं। वैटलेंड के जल संरक्षण, जल प्रबंधन के पीछे यही उद्‌देश्य है कि जल के संरक्षण के साथ-साथ उनके पारिस्थितिक तंत्र को भी संरक्षण दिया जाये। इसके लिए जल की गुणवत्ता बनी रहे, इस हेतु प्रयत्न किये जा रहे हैं। पृथ्वी पर मनुष्य का जीवन बचा रहे इसके लिए प्रत्येक परिस्थितिक तंत्र का बने रहना जरूरी है। पारिस्थितिक तंत्र का संतुलन और पारिस्थितक तंत्र से संतुलन इन दोनों का ही महत्व है।

राष्ट्रीय वैटलेंड प्रबंधन कमेटी :

हमारी राष्ट्रीय वैटलेंड प्रबंधन कमेटी का गठन सन् 1987 में किया गया था। इस कमेटी के कार्य नीचे लिखे अनुसार हैं-

- वैटलेंड से संबंधित नीति, मार्गदर्शिका बनाना जिससे कि वैटलेंड के संरक्षण, प्रबंधन एवं शोधकार्य आगे बढ़ सकें।
- संरक्षण हेतु वैटलेंड का चयन करना।
- कार्यक्रमों के कार्यान्वयन की समीक्षा करना।
- भारतीय वैटलेंड के ऊपर आनेवाली विनिवेश इन्वेंटरी आदि को तैयार करने में सलाह देना।

रामसर अथवा रम्सर कन्वेंशन (रामसर, ईरान, 1971) :

रामसर कन्वेंशन, सभी देशों के वैटलेंड पर समझौते अथवा आपसी सूझबूझ का नाम है। इसके सभी सदस्य अपने देशों की सीमाओं के अंदर आने वाले, अंतर्राष्ट्रीय महत्व के सभी वैटलेंड की पारिस्थितिक गुणवत्ता बनाने रखने तथा अपने सभी जल स्रोतों, आर्द्रभूमियों के समुचित उपयोग मित्रतापूर्ण उपयोग करने हेतु प्रतिबद्ध हैं। कन्वेंशन का मुख्य उद्‌देश्य है- स्थानीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के द्वारा वैटलैंड का संरक्षण एवं समुचित उपयोग सुनिश्चित करना।

- ❑ अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के वैटलैंड की सूची बनाना।
- ❑ वैटलैंड को बनाये रखने के लिए सहयोग करना।

अंतर्राष्ट्रीय महत्व के वैटलैंड की पहचान सुनिश्चित करने के लिए मानदंड :

- ग्रुप अ के वैटलैंड - ऐसे क्षेत्र जो प्रतिनिधि आर्द्रभूमियाँ हों, प्राकृतिक हों अथवा प्राकृतिक के समान हों, अद्वितीय हों बहुत कम देखने में आती हों।
- ग्रुप ब के वैटलैंड - जैव व विविधता की दृष्टि से संरक्षण के लिए जो आर्द्रभूमियाँ महत्वपूर्ण हों।
- यदि वैटलैंड में प्राणियों की प्रजातियाँ खतरे में हैं, उनको भी अन्तर्राष्ट्रीय रूप से महत्व दिया जाये ताकि जैव विविधता को संरक्षण दिया जा सके।
- उस वैटलेंड को अंतर्राष्ट्रीय महत्व का माना जायेगा जिसमें पौधों और जीवों की प्रजातियों को इसलिए संरक्षण देना जरूरी हो जिससे कि वहाँ की जैव विविधता बची रहे।
- ऐसे वैटलेंड को भी अंतर्राष्ट्रीय महत्व प्रदान किया जायेगा। जहॉ पौधों और पशुओं की प्रजातियाँ कठिन परिस्थिति में जीवित रह पा रही हों।
- जहाँ बीस हजार या अधिक जल पक्षियों को शरण मिलती हो।
- ऐसा वैटलेंड जो किसी प्रजाति विशेष की जल पक्षियों की आबादी को निरंतर संपोषित करता हो।
- वैटलेंड, जो देशी मछलियों की उप प्रजातियों अथवा उनके परिवारों के अंतर्संबंधों के लिए लाभकारी हो।
- ऐसे वैटलेंड, जिनके स्थल, प्रवासी मछलियों के प्रजनन के लिए जरूरी या उपयुक्त हों, मछलियों के भोजन के स्रोत हों, अंतर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त रहेंगे।

दो फरवरी को प्रतिवर्ष विश्व वैटलेंड दिवस मनाया जाना सुनिश्चित हुआ है।

राम सर कन्वेंशन के सदस्यों की संख्या 168 तक पहुंच चुकी है।

कुल मान्यता प्रदत्त वैटलेंड की संख्या 2185 हो चुकी है।

प्रत्येक सदस्य देश को अधिकार है कि वह किसी भी नये वैटलेंड की मान्यता के लिए समय-समय पर अपना प्रस्ताव भेज सकता है। सभी देशों से आग्रह किया गया है कि वे वैटलेंड पर सम्मेलनों, सभाओं, गोष्ठियों का आयोजन करेंगे तथा अपने-अपने देश के वैटलेंड के संरक्षण, प्रबंधन, सदुपयोग तथा पर्यातंत्रीय व्यवस्थाओं की देखरेख के उत्तर दायित्व का निर्वाह करेंगे।

वैटलेंड का चयन करते समय पारिस्थितिक विज्ञान वनस्पति शास्त्र, प्राणी विज्ञान, सरोवर विज्ञान, और जल विज्ञान के सिद्धान्तों को ध्यान में रखा जाता है।

(पुस्तक अंश)

राजेन्द्र शर्मा 'अक्षर' का जन्म 1945 को हुआ। आपदा प्रबंधन, हिन्दी साहित्य, पर्यावरण प्रबंधन, मैकेनिकल, संस्कृत भाषा कोविद और आयुर्वेद में उच्चतर शिक्षा प्राप्त श्री शर्मा की प्रसिद्ध कृतियां शब्द वैभव, श्रम भारती, पर्यावरण : वृक्षों के मुख से, वृक्ष मित्र, धरती गोल मटोल, कथा यात्रा, गीत संपदा आदि हैं। इमरजैंसी, प्रिपेयर्डनेस फॉर,एपीजी डिजास्टर में शोध प्रकाशित है। जल प्रबंधन को लेकर यह प्रति एक महत्वपूर्ण रेखांकन है। जल का समुचित प्रबंधन ही हमें वर्तमान और भविष्य में जीवित रख सकता है। जल के महत्वपूर्ण स्रोत भोजवैटलेंड अर्थात भोपाल के तालाब के वैज्ञानिक, ऐतिहासिक एवं सामाजिक पक्षों से अवगत कराने का सफल प्रयास प्रस्तुत कृति के माध्यम से किया गया है।

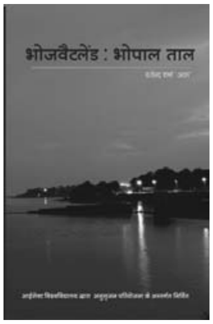

प्रदूषण जनित रोग

डॉ. सुनन्दा दास

स्वाभाविक रूप से पाए जाने वाले प्रदूषक हमें या अन्य जीवों को अत्यधिक हानि नहीं पहुँचाते हैं जबकि मानव निर्मित प्रदूषक मानव गतिविधियों द्वारा उत्पन्न होते हैं जिनसे आसानी से छुटकारा नहीं पाया जा सकता है। मानव निर्मित प्रदूषकों का मुख्य कारण जनसंख्या विस्फोट और अनियंत्रित प्रौद्योगिकी है।

वैसे तो स्वाभाविक रूप से मनुष्य की जरूरत, प्राकृतिक संसाधनों द्वारा पूर्ण होती है। पर जनसंख्या वृद्धि के संग संग आवश्यकताएँ भी द्रुत गति से बढ़ रही है, जिनको पूरा करने के लिए नये उद्योगों का विकास हो रहा है जिनमें प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध उपयोग हो रहा है। इन नई प्रौद्योगिकियों के अपने फायदे हैं पर उससे संबंधित दुष्प्रभाव भी आम है। अतः अब आप समझ ही सकते हैं कि एक छोटी आबादी से जुड़े प्रौद्योगिकी, प्रकृति का दोहन वृहत स्तर पर नहीं कर पाता है लेकिन एक बड़ी जनसंख्या से जुड़े प्रौद्योगिकी का आम जरूरतों को पूरा करने के लिए प्रकृति का शोषण निश्चित रूप से हो रहा है।

वायु प्रदूषण : जहाँ नाना प्रकार से वातावरण प्रदूषित हो रही हैए उस वातावरण को स्वच्छ रखने के लिए किए गए प्रयासों के बावजूद प्रदूषण एक बहुत अहम समस्या बनी हुई है, जो स्वास्थ्य के लिए अत्यंत हानिकारक है। निस्संदेह औद्योगिक उत्सर्जन, अस्वच्छता, अपर्याप्त और त्रुटिपूर्ण अपशिष्ट प्रबंधन, बायोमास और जीवाश्म ईंधन का दहन, दूषित जल, रोडियोधर्मी तत्वों का विकिरण तथा विकसित और विकासशील देशों की बड़ी हुई जनसंख्या ने पर्यावरण को प्रभावित किया है।

जल प्रदूषण : हाल के दशकों में आधुनिक प्रदूषकों की एक विस्तृत शृंखला उभरी है, जैसे घरेलू उत्पादों में कीट नियंत्रक, जल उपचार के रसायन, दवाईयाँ, वर्णक, साल्वेंटस, पॉलीमर, प्लास्टिक, उर्वरक आदि।

अधिकांश प्रदूषक जरूरत से ज्यादा मात्रा में शायद ही कभी वातावरण में मौजूद होते हों आमतौर पर इसलिए उनका स्वास्थ्य पर तत्काल प्रभाव स्पष्ट नहीं हो पाता है। फिर भी, सार्वजनिक रूप से प्रदूषकों के संपर्क में आना स्वास्थ्य के लिए गूढ़ चिंता का विषय है।

मृदा प्रदूषण : कुछ नये प्रदूषकों का उद्‌भव और उससे जुड़े नये जोखिम के कारक जैसे, कुछ प्रदूषकों का कार्य अंतः स्रावी ग्रंथियों के प्रभाव को नाकाम करना होता है जिसका आजीवन स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है। इसका मतलब यह है कि, ऐसे प्रदूषकों पर सतत नियंत्रण रखने की आवश्यकता है। अतः पर्यावरण और मानव गतिविधियों का स्वास्थ्य संबंधित जोखिमों के कारण और पहचान की जरूरत है तथा यह और भी अधिक जरूरी तब हो जाता है जब यह मुद्‌दा एक बड़े पैमाने पर वैश्विक

संकट का रूप ले रहा हो।

प्रदूषण के प्रकार : प्रदूषण कई प्रकार के हैं एवं प्रदूषकों द्वारा फैलाए गए प्रदूषण के उत्सर्जन के विभिन्न स्रोत हैं जिनके द्वारा मानव स्वास्थ्य के प्रति अलग अलग परिणाम है। पर्यावरण के प्रति जागरूक व्यक्ति, प्रदूषकों का स्वास्थ्य संबंधी जोखिमों को कम करने में अपना योगदान दे सकते हैं।

रासायनिक प्रदूषण : आधुनिक दुनिया के कुल नौ मान्यता प्राप्त प्रदूषण के स्रोत हैं। इन स्रोतों का प्रकृति पर ही नहीं नकारात्मक प्रभाव है बल्कि मानव स्वास्थ्य पर भी एक औसत दर्जे का हानिकारक प्रभाव हो सकता है।

विभिन्न प्रकार के प्रदूषण ये हैं जिसने मानव स्वास्थ्य को एक विषम परिस्थिति में डाल रखा हैः

पारिस्थितिकी प्रदूषण : प्रदूषण के सभी प्रकार एक दूसरे से जुड़े हैं। उदाहरण के लिए, ऊर्जा की आपूर्ति के लिए ऊर्जा संयंत्रों में जीवाश्म ईंधन जलाने की आवश्यकता होती है। इन ईंधनों के दहन से तमाम हानिकारक गैसें उत्सर्जित होती हैं जिसका वायु प्रदूषण में महत्वपूर्ण योगदान है। ये गैसें अम्ल वर्षा के रूप में पृथ्वी पर फिर वापस आते हैं जिससे जल प्रदूषण बढ़ जाता है। इस तरह प्रदूषण का चक्र अनिश्चित काल तक ऐसे ही चलता रहता है।

पर्यावरण प्रदूषण और स्वास्थ्य के बीच अटूट संबंध : पर्यावरण प्रदूषण यानी वातावरण में उपस्थित ऐसे अनेक पदार्थ जो आमतौर पर सभी जीवाधारियों के लिए हानिकारक माने गये हों। ये प्रदूषक विभिन्न रसायन ही नहीं बल्कि जैविक पदार्थ जैसे कीटाणु, जीवाणु और अन्य अतिसूक्ष्म जीव, ऊर्जा के विभिन्न स्वरूप जैसे, ताप, विकिरण, शोर आदि शामिल हैं, इसलिए संभावित प्रदूषकों की संख्या अनिवार्य रूप से अनगिनत है। उदाहरण के लिए आम उपयोग में लाए जाने वाले लगभग 30000 रसायनों में से कइयों को अनेक प्रकार के रासायनिक अभिक्रियाओं में या इस्तेमाल के दौरान वातावरण में उत्सर्जित किया जाता है। इनमें से करीब एक प्रतिशत रसायनों की विषाक्तता और उससे स्वास्थ्य संबंधित खतरों के विषय में एक विस्तृत मूल्यांकन किया गया है।

ध्वनि प्रदूषण : जैविक प्रदूषकों की संख्या वास्तव में अनगिनत है। ये न केवल बैक्टीरिया या वाइरस के रूप में ही बल्कि एंडोटॉक्सिन के एक विशाल भंडार के रूप में इस पृथ्वी पर शामिल हैं जो जीव के मृत्यु पश्चात् उसे जीवद्रव्य (प्रोटोप्लाज़्म) से निकलता है। अतः स्वास्थ्य के लिए पर्यावरणीय जोखिमों का अंत नहीं है परन्तु सबसे अधिक महत्वपूर्ण, प्रकृति पर प्रदूषकों द्वारा संभावित खतरों की क्रियाविधि को समझने की जरूरत है।

रेडियोधर्मी प्रदूषण : अतः यह स्पष्ट है कि प्रदूषकों द्वारा फैलाए गए रोगों के वैश्विक बोझ के परिमाण का निर्धारण करना मुश्किल हो जाता है क्योंकि इन रोगों का प्रभाव विकसित और विकासशील दुनिया, अमीर और गरीब, पुरूषों और महिलाओं में, वयस्कों और बच्चों में, शिशुओं और बच्चों में एवं मानव जाति और अन्य जीवों के मध्य अलग अलग हैं। लेकिन इसका यह मतलब यह नहीं कि विकसित दुनिया प्रदूषण के खतरों से अछूती है या फिर विकास समस्त पर्यावरणीय स्वास्थ्य संबंधी बीमारियों की अचूक दवा है।

(पुस्तक अंश)

एम.एस-सी, डीफिल और पी.एच-डी शिक्षित डॉ. सुनंदा दास का जन्म 13 जून 1959 को इलाहाबाद में हुआ। उन्हें एकेडमिक एक्सीलेंस अवार्ड, शताब्दी सम्मान : विज्ञान परिषद, श्रीमती उमाप्रसाद विज्ञान लेखन सम्मान से सम्मानित डॉ. सुनंदा दास की रचनायें वैज्ञानिक, साइंस रिपोर्टर, विज्ञान और अविष्कार आदि में प्रकाशित होती रही हैं। ग्रीन हाउस गैसें, शोधपत्र, रिव्यू आर्टिकल, बुक चेप्टर आदि कृतियां प्रकाशित हैं। आप अकार्बनिक रसायन विज्ञान, चौधरी महादेव प्रसाद महाविद्यालय में एसोसियेट प्रोफेसर हैं। प्रस्तुत पुस्तक में प्रदूषण से जन्म लेने वाले रोगों का विश्लेषण है। पूर्णतः प्रदूषण युक्त विश्व संभव नहीं है, पर यह प्रयास तो किया जा सकता है कि हम भौगोलिक सीमाओं की परवाह किए बगैर उसे न्यूनतम करें। प्रदूषण और प्रदूषणजनित रोग एक ज्वलंत समस्या ही नहीं बल्कि एक तरह का नासूर है जो साल दर साल हमारे द्वारा की गई गलतियों का परिणाम है। पुस्तक हमें अपनी प्राकृतिक संसाधनों का इस्तेमाल सोच समझकर करने और प्रदूषण रोकने या कम करने की दिशा में सकारात्मक प्रयास करने के लिए जागरूक करती है।

जन्तुओं में भी है गणन क्षमता

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मिश्र

महान दार्शनिक एवं वैज्ञानिक गैलीलियो ने भी कहा था– 'गणित ही वह भाषा है जिसमें ईश्वर ने विविधतापूर्ण सृष्टि रची जो युगों-युगों से सहज चलती आ रही है।' महावीर आचार्य अपने समय के अति प्रसिद्ध गणितज्ञ थे। उन्होंने गणित के विषय में जो कुछ भी उस समय कहा था वह बहुत बड़ा सत्य था, किन्तु उस समय की अपेक्षा आज की डिजिटल दुनिया में गणित का प्रयोग हर तरफ बहुत अधिक बढ़ गया है। विज्ञान की कोई भी ऐसी शाखा नहीं है जिसमें गणित का उपयोग न हो। अतः गणित की जानकारी और अध्ययन, हर काल की अपेक्षा, आज और भी अधिक आवश्यक है तथा इस वैज्ञानिक और तकनीकी युग में गणित के अध्ययन की उपेक्षा हानिकर और घातक भी है।

गणित वह शास्त्र है जिसमें मुख्य रूप से गणना की जाती है। यह शब्द बहुत प्राचीन है और वैदिक साहित्य से ही प्राप्त होता है। प्राचीन भारत में गिनने और गिनती के लिए गणन शब्द का प्रयोग होता था, इससे ही 'गणित' शब्द बना। 'गणित' शब्द का मूल अर्थ है- गिना हुआ। किन्तु आज गणित एक विषय के रूप में जाना जाता है और अपने प्राचीन रूप की अपेक्षा आज सैकड़ों गुना अधिक विस्तृत, आधुनिक, सैद्धान्तिक और उपयोगी हो गया है।

गणित अपने अर्थ से ही यह इशारा करता है कि इसका आरम्भ गणना से हुआ है। किन्तु गणना बुद्धि से पहले ही संख्या बुद्धि आ जाती है। जैसे- किसी छोटे बच्चे से पूछने पर कि कितनी टाफी लोगे? वह झट से कोई संख्या बोल देता है- पांच या चार या तीन। किन्तु प्रायः लोग उस बच्चे को एक से अधिक टाफी देकर कह देते है, लो हो गया न। बच्चा प्रायः सन्तुष्ट हो जाता है। लेकिन जब एक टाफी दी जाती है तो वह संतुष्ट नहीं होता और गलती को पकड़ लेता है। ऐसा क्यों है? आगे विचार किया गया है।

इस अन्तर को स्पष्ट करने वाली एक रोचक कथा श्रीमद्भागवत महापुराण में आती हैं। यह कथा संक्षेप में इस प्रकार है- 'जब आकाशवाणी हुई और कंस को यह पता चला कि वसुदेव और देवकी से उत्पन्न आठवीं सन्तान तुम्हारा काल बनेगी, तब वह बेचैन हुआ। किन्तु जब उनके यहाँ पहला बच्चा जन्म लिया तो कंस ने उसकी हत्या करने से इनकार कर दिया। क्योंकि यह तो पहला बच्चा था जबकि उसका (कंस का) वध करने वाला तो उनका आठवाँ बच्चा होगा। किन्तु कूटनीति के निपुण नारद जी कंस के पास आये। नारद ने एक वृत्त बनाया और उसकी परिधि पर आठ गोटियाँ रखकर कंस से पूछा-'बताइये राजन! इसमें आठवीं गोटी कौन सी है?' कंस कुछ नहीं बोल पाया क्योंकि वृत्त की परिधि पर रखी गोटियों में कोई भी गोटी पहली हो सकती है और कोई भी आठवीं। कंस इससे भ्रमित हो गया और प्रत्येक सन्तान को आठवीं मानता हुआ उनकी हत्या करने लगा।'

इस कथा में कंस ने आरम्भ में तो अपनी गणना बुद्धि लगाई, किन्तु नारद ने उसे संख्या बुद्धि लगाने के लिए प्रेरित किया। अतः यह कहा जा सकता है कि संख्या-बुद्धि से किसी समूह में यह अनुमान नहीं होता कि कौन सी वस्तु पहली है और कौन सी दूसरी आदि। परन्तु गणना-बुद्धि में यह बात आवश्यक है और स्पष्ट होती है। गिनती करने की और संख्या करने की बुद्धि प्रकृति की दी हुई है। सामान्य व्यवहार में यह पता चलता है कि बहुत से जीवों में यह बुद्धि पाई जाती है। चिड़ियाँ प्रायः तीन तक की संख्या में अपने अंडे गिन लेती हैं। प्रयोग के आधार पर यह कहा गया है कि कौआ चार वस्तुओं तक की संख्या गिन लेता है। गैंडा भी अपने चार बच्चों तक गिन सकता है। आदमी की इस क्षमता में धीरे-धीरे बहुत अधिक, सम्भवतः अपरिमित विस्तार हुआ है। कारण यह कि वह तर्क से, अभ्यास से और आवश्यकता के अनुसार अपनी सोच के विस्तार से आगे बढ़ता रहा।

संख्यांक : जिन संकेतों से संख्या लिखी जाती है उन संकेतों को अंक-संकेत या संकेतांक या संख्यांक कहते हैं। जैसे- 1, 2 और 3 क्रमशः संख्याओं एक, दो और तीन के संकेतांक या संख्यांक हैं। आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयुक्त संकेतांक और संकेतांक पद्धति को हिन्दू-अरबियन अंक पद्धति कहते हैं। प्रायः कुछ प्रचलित संख्यांक इस प्रकार हैं-

पद्धति	एक	दो	तीन	चार	पांच	छः	सात	आठ	नौ	शून्य
अंतर्राष्ट्रीय पद्धति	1	2	3	4	5	6	7	8	9	0
हिन्दू अरबियन पद्धति	1	2	3	4	5	6	7	8	9	0
यूरोपीय पद्धति	1	2	3	4	5	6	7	8	9	0
अरबी पद्धति										
देवनागरी पद्धति	1	2	3	4	5	6	7	8	9	0
रोमन पद्धति	I	II	III	IV	V	VI	VII	VIII	IX	X* दस

ध्यान देने योग्य है कि रोमन में शून्य के लिए संकेत नहीं है। संख्यांक के सबसे पुराने चिन्ह मिस्र में मिले हैं। ये चिन्ह 3400 वर्ष ई. पू. के माने जाते हैं। उसके बाद के अंकचिन्ह मेसोपौटामिया में प्राप्त हुए हैं, इनको 3000 वर्ष ई. पू. का माना जाता है। भारत और चीन में संख्यांक चिन्ह 300 ई. पू. के लगभग से मिलते हैं। भारतीय संख्यांक ही देश विदेश में प्रचलित होते हुए अपने आधुनिक रूप में आज व्यवहार में हैं और उन्हें ही अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त है। ये संख्यांक अरब होते हुए यूरोप में पहुंचे, इस कारण इन्हें इन्डो-अरबिक संख्यांक कहा गया। इन संख्याओं के अंतर्राष्ट्रीय स्वीकृति का कारण है कि बड़ी से बड़ी संख्या भी इन दस प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त की जा सकती है।

बड़ी संख्याएँ और उनकी संज्ञाएँ (नाम) :

भारत में बड़ी संख्याओं को सूचित करने वाले नाम वेदों से ही प्राप्त होते हैं। जैसे एक (1), दश (10), शत (100), सहस्र (1000), अयुत (10000), नियुत (1,00,000), प्रयुत (10,00,000) आदि। इस क्रम में सबसे बड़ी संख्या परार्ध (10,00,00,00,00,000) दिया गया है। चूंकि इन संख्याओं के क्रम में प्रत्येक संख्या अपने पहले आने वाली संख्या से 10 गुनी अधिक है। इस कारण भास्कर द्वितीय ने अपने ग्रंथ लीलावती में इनको दशगुणोत्तर संख्यााएँ कहा है। संख्याओं के नामों (संज्ञाओं) की एक लम्बी सूची जैन-ग्रंथ ''ललित विस्तर'' में दी गई है जिसमें उन्होंने 10^{53} (एक की दाईं ओर 53 बार शून्य लिखने से प्राप्त संख्या तक का नाम दिया है। उन्होंने 10^{53} को ''तल्लक्षणा'' कहा है।

इसी प्रकार की एक मजेदार लम्बी सूची 'काच्चायन- कृत-पाली-व्याकरण' नामक ग्रंथ में मिलती है जिसमें उन्होंने सबसे बड़ी संख्या 10^{140} (एक के दायें 140 बार शूल्य लिखने से प्राप्त संख्या) का नाम 'असंख्येय' लिखा है। इससे भी बड़ी संख्या जैन ग्रंथों में 'शीर्ष प्रहेलिका' नामक समय को सूचित करती है जिसका मान 194 स्थान लेता है।

(पुस्तक अंश)

डॉ.राजेन्द्र प्रसाद मिश्र का जन्म 5 नवम्बर 1949 को केरवां कलां ग्राम जनपद प्रतापगढ़ हुआ। गणित में स्नातकोत्तर के बाद जोनपुर से पी.एच-डी की। इन दिनों आप मिर्जापुर में प्रवक्ता हैं। 'आधुनिक गणितकोश' और 'हिन्दी में विज्ञान' कृतियां प्रकाशित हैं। आपको विज्ञान परिषद शताब्दी सम्मान, आर्यभट्ट अशीष सर्जना पुरस्कार, बाल विज्ञान कार्यक्रम सम्मान आदि से विभूषिक किया गया है। प्रशिक्षण एवं गोष्ठी में आपकी सक्रिय सहभागिता रही है।

पाठक समूह के प्रत्येक वर्ग को उनके उपयोग, प्रेरणा और गणितीय आनंद के लिए गणितीय सामग्री का समावेश इस प्रति में किया गया है। गणित का आदि इतिहास, भारत के भाल की विभूति है और भारतीयता के स्वर्णिम इतिहास की गौरव गाथा है। भारत की उस प्राचीन बौद्धिक गतिशीलता को पुनः जीवन्त बनाने के लिए गणित के अध्ययन की आवश्यकता को प्रस्तुत प्रति के माध्यम से रेखांकित किया गया है।

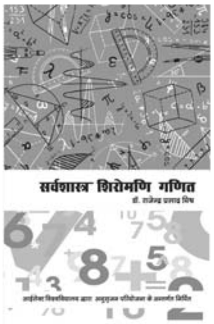

शरीर में सूक्ष्म जीवों की उपस्थिति

डॉ. पंकज श्रीवास्तव

फारेन्सिक साइंस (न्यायालयिक विज्ञान), विज्ञान की वह शाखा है जिसमें विज्ञान के मूलभूत सिद्धांतों एवं मूल शाखाओं में उपलब्ध ज्ञान एवं विधियों का प्रयोग किसी अपराध की वस्तु स्थिति को स्पष्ट करने एवं उसे तथ्यात्मक रूप से वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सिद्ध करने में किया जाता है। यह ऐसा विविध विषयी विज्ञान है जिसमें विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञान के हर पहलू का समावेश है।

फोरेन्सिक शब्द लेटिन शब्द फोरेन्सिस से बना है जिसका अर्थ है, न्याय से संबंधित। अतः फोरेन्सिक साइन्स वह विज्ञान है जो न्याय दिलाने में उपयोगी हैं। फोरेंसिक विज्ञान को न्याय के लिये विज्ञान का अनुप्रयोग भी माना जा सकता है। फारेन्सिक साइंस अपराध के बिखरे हुए अनसुलझे तत्वों को जोड़ने वाली एक कड़ी है। इसके अन्तर्गत अपराधी की अपराध घटनास्थल और पीड़ित से संबद्धता वैज्ञानिक रूप से सिद्व की जाती है।

किसी घटना के घटित हो जाने के बाद सबसे पहला प्रश्न यह होता है कि क्या घटना घटित हुई एवं उसका घटना क्रम क्या था? क्योंकि घटना के बारे में जानकारी देने वाला घटना स्थल पर कोई नहीं होता है। घटना स्थल की स्थितियाँ और वहाँ उपलब्ध साक्ष्य ही उस घटना के मूक गवाह होते हैं। दूसरा अहम प्रश्न होता है अपराधी की अपराध में संलग्नता को सिद्ध करना और उतना ही महत्वपूर्ण है निर्दोष को घटना क्रम से एक्सक्यूड करना और इन प्रश्नों का उत्तार जो समय के साथ परिवर्तन हो वैज्ञानिक दृष्टि से की गई विवेचना से ही मिल सकता है क्योंकि गवाह बयान बदल सकते हैं वैज्ञानिक तथ्य नहीं।

फोरेन्सिक साइंस का आधार है घटना स्थल पर मिलने वाले भौतिक साक्ष्य, जिनका सूक्ष्म अवलोकन और परिणाम स्वरूप प्राप्त निष्कर्ष किसी घटना को स्पष्ट करता है। घटना सील पर कोई भी चीज तब तक दिखाई नहीं देती जब तक उसकी खोज न की जाए। वैज्ञानिक दृष्टिकोण यह है कि किसी वस्तु के भौतिक रूप के साथ-साथ उसकी उस स्थान और क्रिया-कलाप से संबद्धता स्थापित की जाए।

प्रत्येक घटना भिन्न परिस्थितियों में घटित होती है और उनको प्रभावित करने वाले कारक भी भिन्न होते हैं। कोई घटना बिल्कुल समान परिस्थितियों में पुनः घटित होगी इसकी संभावना नगण्य है। साथ ही फोरेन्सिक साइंटिस्ट का वास्ता ऐसे साक्ष्यों से पड़ता है जो आकार/मात्रा में कम एवं प्रायः अनियंत्रित प्रतिकूल परिस्थितियों में पड़े हुये होते हैं और प्रायः प्रकरण पूर्व की प्रमाणिक जानकारी भी उपलब्ध नहीं होती है। उपरोक्त सीमाओं के बावजूद भी फोरेन्सिक साइंस, विज्ञान के मूलभूत सिद्धांतों का प्रयोग कर सक्षम साबित होती रही है।

(पुस्तक अंश)

डॉ. पंकज श्रीवास्तव का जन्म 9 अप्रैल 1968 को गोरखपुर में हुआ। एम.एस-सी एवं पी.एच-डी, सूक्ष्म जीव विज्ञान में की और डीएनए फिंगर प्रिंटिंग यूनिट, राज्य न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला सागर में वैज्ञानिक अधिकारी एवं रासायनिक परीक्षक हुये। आपकी प्रकाशित कृतियां पर्यावरण संरक्षण में पुलिस की भूमिका, पर्यावरण शिक्षा, फोरेंसिक साइंस एवं अपराध अनवेषण और पर्यावरण शिक्षा प्रकाशित हैं इसके अतिरिक्त अंग्रेजी में आधा दर्जन पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। आपके 22 शोध पत्रों भी प्रकाशित हुए हैं। पंडित गोविंद वल्लभ पंत राष्ट्रीय सम्मान से सम्मानित डॉ. पंकज श्रीवास्तव की प्रशिक्षण कार्यक्रमों और सेमीनार में उल्लेखनीय भागीदारी है। प्रस्तुत पुस्तक में आपराधिक मामलों के साक्ष्यों की वैज्ञानिक पड़ताल है। समाज में आए दिन अपराध होते रहते हैं जो जनता में यह जानने की उत्सुकता जगाए रहते हैं कि अपराधियों तक पहुंचने का विज्ञान कैसा होता है। जैसे-जैसे विज्ञान का विकास हुआ है, फोरेन्सिक साइंस की क्षमता बढ़ती गई है। यह पुस्तक फोरेन्सिक साइन्स को स्पष्ट करने और आमजन तक पहुँचाने का प्रयास है।

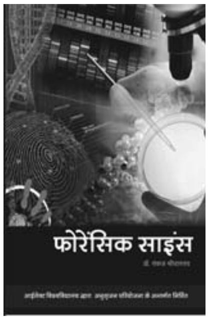

जीव पर्यावरण पर नियंत्रण रखते हैं

तोषी जैन

सन 1676 में एक डच व्यापारी एन्टोनीवान ल्यूवेनहॉक ने रॉयल सोसायटी ऑफ लंदन को एक पत्र लिखा जिसमें उन्होंने बताया कि उन्होंने कुछ छोटे, नग्न आँखों से दिखाई न देने वाले जीवों के समुदाय को एक सरल सूक्ष्मदर्शी से देखा है। उनकी इस रिपोर्ट ने विज्ञान का एक नया विषय विकसित किया जिसे आज सूक्ष्मजीव विज्ञान कहा जाता है। परन्तु इस विज्ञान को रफ्तार लुई पाश्चर (1822–1895) एवं राबर्ट कॉक (1843-1910) के कार्यों के पश्चात् मिली जिन्होंने पहली बार सूक्ष्मजीवों के अस्तित्व को सिद्ध किया।

इन जीवों में अत्यधिक विविधता है। इन जीवों का अन्य जीवों पर व्यापक प्रभाव है। ये जीव पर्यावरण पर नियंत्रण रखते हैं। ये जीव बहुत से खाद्य पदार्थों के निर्माण के लिए आवश्यक है, एवं बहुत सारी जैव क्रियाओं को समझने के लिये प्रायोगिक प्रदर्श हैं। जीवाणु, कवक, शैवाल, प्रोटोजोआ और सजीव एवं निर्जीव को जोड़ने वाली कड़ी विषाणु, जो अनेकों संक्रामक रोगों के कारक हैं, ये सभी सूक्ष्मजीवों के विविध प्रकार हैं। सूक्ष्मजीव हमारे चारों ओर, हमारे शरीर के अंदर, हमारी त्वचा पर अर्थात् शरीर के बाहर एवं हमारे चारों ओर के पर्यावरण में उपलब्ध हैं और इनका कुल भार हमारे शरीर के कुल भार में लगभग 2 किलोग्राम होता है। सूक्ष्मजीव विज्ञान ने बहुत से ऐसे रास्ते स्पष्ट किये हैं जिससे जीवन से संबंधित प्रश्नों का उत्तर ढूंढा जा सका। हमारा शरीर एक सूक्ष्मजीवीय विश्व है। वृहद वैश्विक शोध परियोजनाओं प्रमुखतः ह्यूमन माइक्रोबायोम प्रोजेक्ट यह सिद्ध कर चुका है कि मानव शरीर की 75 प्रतिशत से अधिक कोशिकाओं में सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति है। मानव शरीर में पैरो के नाखून से सिर के बालों तक शरीर के लगभग सभी भागों पर सूक्ष्म जीवों की उपस्थिति प्रमाणित की जा चुकी है। सूक्ष्म जीवों की इन स्थानों पर संख्या एवं विविधता शरीर के उस भाग पर नमी की उपस्थिति से प्रभावित होती है। इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि मानव शरीर में मानव जीनोम के अतिरिक्त एक सूक्ष्मजीवीय जीनोम भी उपस्थित है। आधुनिक शोध यह बताते है कि इन सूक्ष्म जीवों के निर्धारण से मानव शरीर की वैयक्तिक पहचान भी सुनिश्चित की जा सकती है। यहाँ तक कि हमारे द्वारा उपयोग किये जा रहे इलेक्ट्रॉनिक गजट जैसे मोबाईल फोन, कम्प्यूटर की बोर्ड, माउस आदि से भी वैयक्तिक पहचान का निर्धारण संभव है। बहुत से सूक्ष्मजीव जैव संसार के जैव रासायनिक महत्व को समझने में प्रायोगिक जीव है। सूक्ष्मजीवों के अध्ययन को सूक्ष्मजीव विज्ञान कहा जाता है। सूक्ष्मजीव विज्ञान के अर्न्तगत सूक्ष्मजीवों की संरचना, उनके प्रकार, जनन, कार्यिकी उपापचय, आनुवांशिकी, सूक्ष्मजीवों के पर्यावरण एवं अन्य जीवों से संबंध एवं उनके वर्गीकरण का अध्ययन सम्मिलित है। सूक्ष्मजीव ऐसे जीव हैं जिन्हें हम नग्न आंखों से नहीं देख सकते। हमारी आँखें 100mm से छोटी वस्तु को देखने में सक्षम नहीं है। इस आकार से छोटी वस्तु को देखने के लिए उस वस्तु का आवर्धन आवश्यक है।

(पुस्तक अंश)

तोषी जैन का जन्म 26 जून 1988 को रहली सागर में हुआ। सूक्ष्म जीवविज्ञान में एम.एस-सी उपाधि प्राप्त की। एमपीसीएसटी प्रोजेक्ट, डीएनए फिंगर प्रिंटर यूनिट, राज्य न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला सागर में आप जूनियर रिसर्च फेलो हैं आपने डॉ. पंकज श्रीवास्तव के साथ 'सूक्ष्म जीवविज्ञान' पुस्तक का सह-लेखन किया। अब तक आपके 7 शोध पत्र प्रकाशित हुए हैं। आपको राष्ट्रीय शोध सम्मेलनों में दो बेस्ट पेपर प्रेजेंटेशन अवार्ड मिलें हैं। प्रस्तुत पुस्तक में सूक्ष्मजीव विज्ञान के विभिन्न पक्षों पर विचार हैं। सूक्ष्मजीवों जैसे जीवाणु, विषाणु, कवक और शैवाल सर्वत्र पाये जाते हैं। सूक्ष्म जीवविज्ञान का महत्व दिनों दिन बढ़ता ही जा रहा है। डीएनए की खोज और जेनेटिक इंजीनियरिंग के परिणामस्वरूप उच्च प्रोद्यौगिकी जैसी क्रियाओं के कारण ही सूक्ष्म जीवविज्ञान सुर्खियों में है। यह पुस्तक सूक्ष्म जीव विज्ञान के सभी प्रमुख क्षेत्रों का आधार भूत ज्ञान एवं संतुलित परिचय देती है।

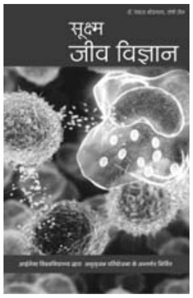

विज्ञान संचार : विचार संपदा का विस्तार

चक्रेश जैन

विश्व में अधिकांश राष्ट्रों के आर्थिक, सामाजिक, औद्योगिक तथा सांस्कृतिक विकास में विज्ञान की विशिष्ट भूमिका रही है। बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में हुए दोनों विश्वयुद्ध विज्ञान की महत्ता एवं आवश्यकता को रेखांकित करते हैं। इसी सदी के उत्तरार्द्ध में सर्वथा दो नये अनुशासनों का उदय हुआ। ये हैं- विज्ञान संचार और लोकजीवन में विज्ञान की समझ। यह वही दौर है, जिसमें वैज्ञानिक सोच के प्रोत्साहन की दिशा में विचार मंथन का मार्ग भी प्रशस्त हुआ। वास्तव में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का भौतिक सुख-सुविधाओं के विस्तार और विचार सम्पदा को समृद्ध से समृद्धतर बनाने में बड़ा योगदान रहा है। मध्यप्रदेश में वर्तमान सदी के दौरान लोक जीवन में विज्ञान के विस्तार और वैज्ञानिक सोच को बढ़ावा देने की दृष्टि से विज्ञान संचार की अहम भूमिका दिखाई दी है। यहां की आबादी लगभग सवा सात करोड़ है। प्रदेशवासियों को विकास प्रक्रिया में सहभागी बनाने, उनमें वैज्ञानिक सोच विकसित करने और वैज्ञानिक मुद्दों के प्रति जागरूकता बढ़ाने में विज्ञान संचार अहम भूमिका निभा सकता है। यद्यपि यहां विज्ञान संचार शैशव अवस्था में है, लेकिन धीरे-धीरे इसका विस्तार हो रहा है। विज्ञान संचार की चर्चा करते समय प्रायः यह प्रश्न सहज ही उठता है कि विज्ञान संचार आखिर किस चिड़िया का नाम है? विज्ञान की विभिन्न विधाओं और विषयों की जानकारियां, वैज्ञानिक विचारों और मुद्दों को एक छोर से दूसरे छोर तक पहुंचाने की प्रक्रिया को विज्ञान संचार कहते हैं। कुछ विशेषज्ञों के अनुसार विज्ञान की जटिल जानकारियों सरल, रोचक और प्रभावी भाषा में संप्रेषित करने की प्रक्रिया विज्ञान संचार कहलाती है। विज्ञान संचार का दायरा व्यापक है और इसे परिभाषाओं में सीमित नहीं किया जा सकता।

विज्ञान संचार में स्रोत (सेंडर), लक्ष्य वर्ग (रिसीवर) और माध्यम (मीडियम) ये तीनों घटक अनिवार्य रूप से सम्मिलित हैं। विज्ञान संचार केवल विज्ञान की बातें लोगों तक पहुंचाना नहीं है। यह एक कला भी है। इन दोनों के मेल से प्रभावी विज्ञान संचार का उद्देश्य पूरा हो सकता है। विज्ञान संचार सर्वथा नया शब्द है। इसके लिए पूर्व में कुछ और शब्दों का उपयोग किया गया है। इनमें विज्ञान प्रसार, विज्ञान लोकप्रियकरण विज्ञान की जन समझ, विज्ञान लोकव्यापीकरण आदि सम्मिलित हैं। विज्ञान संचार को अंग्रेजी भाषा में साइंस पॉपुलराइजेशन, पब्लिक अंडरस्टेंडिंग ऑफ साइंस और साइंस कम्युनिकेशन के नाम से जाना जाता है। मध्यप्रदेश विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् में विज्ञान संचार की गतिविधियों और कार्यक्रमों के प्रसार के लिये दीर्घ अवधि से विज्ञान लोकव्यापीकरण शब्द का प्रयोग किया गया है। सब मिलकर इन सभी शब्दों का अभिप्राय और उद्देश्य एक ही है। लोकप्रिय विज्ञान संचार की परिधि व्यक्ति तक सीमित नहीं है। लोक विज्ञान के शिक्षण और प्रचार-प्रसार से जुड़ी स्वैच्छिक संस्थायें भी इसमें सहभागिता कर सकती हैं। मध्यप्रदेश में आईसेक्ट, एकलव्य, साइंस सेंटर (ग्वा.) मध्यप्रदेश विज्ञान भारती, भारत ज्ञान विज्ञान समिति, चिल्ड्रन साइंस सेंटर आदि ने सहभागिता की है।

(पुस्तक अंश)

चक्रेश जैन का जन्म 1956 में गुना मध्यप्रदेश में हुआ। साइंस कम्प्यूनिकेशन में उच्चतर शिक्षा प्राप्त चक्रेश जैन के 700 से अधिक आलेख प्रकाशित हुए हैं। 'सीएसआईआर समाचार' और साइंस इंडिया पत्रिका के संपादक रहे श्री जैन ने विज्ञान संचार विषयक शोध पत्र लिखे हैं। आकाशवाणी और दूरदर्शन पर विज्ञान के विभिन्न विषयों पर वार्ताएं प्रसारित होती रही हैं। विज्ञान और समाज के बीच अभिन्न एवं अटूट रिश्ता है। बीसवीं सदी में दो नये अनुशासनों-विज्ञान संचार और लोकजीवन में विज्ञान की समझ का उदय हुआ है। लेखक ने बाताया है है विज्ञान संचार यात्रा अपने शुरूआती दौर में चुनौतीपूर्ण दौर से गुजरी है, परन्तु विज्ञान प्रेमी व्यक्तियों और संस्थाओं की सक्रिय सहभागिता से यह यात्रा सतत जारी है।

हमारे प्रेरणा स्रोत : भारतीय वैज्ञानिक

राम शरण दास

28 फरवरी को पूरे देश में राष्ट्रीय विज्ञान दिवस मनाया जाता है। इस अवसर पर विज्ञान को आम आदमी तक पहुँचाने के लिए विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। यह दिन भारतीय विज्ञान के लिए अत्यन्त गौरवमय दिवस है, क्योंकि इसी दिन 1928 में महान भरतीय वैज्ञानिक श्री चन्द्रशेखर वेंकट रमन ने अपनी वह महान खोज पूरी की थी जिसके लिए उन्हें 1930 में विश्व का सर्वोच्च सम्मान, नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ था। श्री रमन का जन्म 7 नवम्बर, 1988 को तमिलनाडु में त्रिरूचिरापल्ली के निकट एक छोटे से गाँव में हुआ। उनके पिता श्री आर. चन्द्रशेखर अय्यर विशाखापतनम के एक कॉलेज में भौतिकशास्त्र के प्राध्यापक थे। शायद यही कारण था कि भौतिक में उनकी बचपन से ही रूचि रही।

प्रारंभ से ही रमन अत्यन्त मेधावी थे। उन्होंने 11 वर्ष की आयु में मैट्रिक और 13 वर्ष की आयु में इन्टरमीडिएट पास कर लिया था। तब उन्हें मद्रास के प्रेंसीडेंसी कालेज मे प्रवेश दिलाया गया। एक दिन जब प्रोफेसर ई.एस. इलियट अंग्रेजी कविता पढ़ाने कक्षा में आये तो 13 साल के चमकीली आँखों वाले छोटे लड़के को कक्षा में देख कर पूछा, तुम इस कक्षा में क्या कर रहे हो। रमन ने उत्तर दिया, 'सर, मैं इसी कक्षा का विद्यार्थी हूँ', पहली मुलाकात में ही रमन प्रोफेसर इलियट के चहेते विद्यार्थी बन गये।

1921 में डा. आशुतोष मुखर्जी ने ब्रिटिश साम्राज्य के विश्वविद्यालयों के सम्मेलन में भाग लेने के लिए उन्हें लन्दन भेजा। इस सम्मेलन में उन्हें जहाँ एक ओर विश्व के महान् वैज्ञानिकों के साथ विचार विनिमय का अवसर मिला वहीं अनेकों खट्टे-मीठे अनुभवों ने उनके भावी चिन्तन को प्रभावित किया।

श्री रमन आत्मविश्वास - जन्य स्वाभिमान से परिपूर्ण व्यक्ति थे। अपने भाषण के बीच पीछे की सीट पर उन्हें बैठे देख कर अर्नेस्ट रूदरफोर्ड ने पहचाना और अपने पास आकर बैठने के लिए आमंत्रित किया - इस सम्मान से जहाँ वे रोमांचित हुए वहीं अपने 'वायलिन ध्वनियों की प्रकृति' विषयक भाषण के बाद जब किसी ने चुटकी ली कि ऐसे ही वाद्ययन्त्रों से छेड़-छाड़ की भौतिकी बखान करके आप एफ. आर.एस. (फैलो ऑफ रॉयल सोसायटी) बनेंगें क्या? तो अपने मित्र से उन्होंने कहा ये लोग जो आज मुझे मान्यता नहीं देते मेरे नोबल पुरस्कार पाने के बाद अपनी कही बात पर शर्मिंदा होंगे।

अभी तक श्री रमन का शोधकार्य अधिकतर ध्वनि एवं वाद्ययन्त्रों के कार्य सिद्धान्तों से संबद्ध था। इंग्लैंड से वापस लौटते हुए आकाश एवं समुद्र जल की नीलिमा ने उनको प्रकाश और प्रकाश-प्रकीर्णन के अध्ययन की ओर उन्मुख कर दिया। अगले कुछ वर्षो में वे उपलब्धियों के शिखर तक चढ़ते चले गये। 1923 में कलकत्ता विश्वविद्यालय ने उन्हें डी.एससी. की मानद उपाधि प्रदान की। 1924 में वे रॉयल सोसायटी के फैलो (F.R.S) बन गये।

अब श्री रमन की प्रेरणा से इन्डियन एसोशियेसन फॉर दी कल्टिवेशन ऑफ साइन्स के साथ भी बहुत से युवा वैज्ञानिक

जुड़ने लगे थे। जैसे के.एस. रामानाथन, एस.सी. सरकार, एल.ए. रामदास एवं एस.के. मित्रा। प्रकाश-प्रकीर्णन संबंधी अधिकतर अन्वेषणों में श्री कृष्णन श्री रमन के सहयोगी रहे।

1927 दिसम्बर की एक ठंडी शाम थी। एसोसिशयेसन के मुख्यालय 210, भाऊ बाजार की पुरानी इमारत में श्री रमन कुछ अभ्यागतों को अपने द्वारा निर्मित उपकरण दिखा रहे थे कि कृष्णन समाचार लाये कि ए.एच. काम्पटन ने 1927 का नोबेल पुरस्कार जीता है। सब लोग प्रसन्न हो गये।

कॉम्पटन को यह पुरस्कार 1922 में की गई उनकी खोज कॉम्पटन-प्रभाव के कारण दिया गया था जिसके अनुसार पदार्थो से होकर गुजरने की प्रक्रिया में एक्स-किरणों की प्रकृति बदल जाती है और यह बदलाव भिन्न पदार्थों के लिए भिन्न होता है। श्री रमन ने विचार किया कि जो एक्स-किरणों के साथ घटता है वही पारदर्शी माध्यम से गुजरते समय प्रकाश के साथ भी घटना चाहिए। इस सिद्धान्त की पुष्टि के लिए उन्होंने मात्र 200रू मूल्य के स्वनिर्मित उपकरण द्वारा प्रयोग किये और चार महीने बाद ही बैंगलोर में वैज्ञानिकों की एक सभा में अपनी उस खोज की घोषणा की जिसे दुनिया ने रमन-प्रभाव कहा। यह खोज इतनी महत्वपूर्ण थी कि इसके लिए 1929 में ब्रिटिश सरकार ने उन्हें सर की उपाधि प्रदान की और 1930 में उन्हें भौतिक शास्त्र का नोबेल पुरस्कार मिला। उनके बाद आज तक कोई दूसरा नोबेल पुरस्कार किसी भारतीय भौतिकशास्त्री को प्राप्त नहीं हो सका।

अप्रैल 1933 में बैंगलोर के भारतीय विज्ञान संस्थान में भौतिक विभाग की स्थापना की गई तो डॉ. रमन को इसका अध्यक्ष बनाया गया। यहाँ वे 1948 तक रहे और उच्च स्तरीय मौलिक भोध की नींव डाली। 1949 में उन्होंने बैंगलोर में ही रमन शोध संस्थान की स्थापना की और स्वतंत्र रूप से वैज्ञानिक गवेषणा में जीवन पर्यन्त लगे रहे। उपरोक्त दोनों संस्थान श्री रमन के अमर स्मृति-चिन्ह हैं।

सर रमन अत्यन्त प्रत्युन्नमति प्रज्ञा पुरूष थे। अपने नोबेल लेक्चर में रमन-प्रभाव समझाने के लिए विभिन्न द्रवों से प्रकाश गुजार कर उन्होंने रमन-प्रभाव का प्रदर्शन किया। एल्कोहल भी प्रयोग का एक अंग था। रात्रि भोज में जब लोगों ने उनसे शराब पीने का बहुत आग्रह किया तो मांस मदिरा से दूर रहने वाले रमन ने कहा एल्कोहल पर रमन-प्रभाव तो मैंने आपको दिखाया था पर रमन पर एल्कोहल-प्रभाव देखने का अवसर मै आपको नहीं दूँगा।

अनेक अन्य महापुरूषों की तरह श्री रमन भी बच्चों से बहुत प्यार करते थे। अपने जीवन की संध्या में जब प्रशासनिक और भारतीय वैज्ञानिक समाज की गुटबन्दी एवं लक्ष्यहीनता से क्षुब्ध होकर उन्होंने अपने को शोध-कार्यो से दूर कर लिया तो एक सुबह अपने बगीचे में बच्चों के एक समूह को हँसते खिलखिलाते देखकर मानव जीवन को सुखी और समृद्ध करने की उनकी चाह फिर लौट आई। उसके बाद वे बच्चों के साथ खेलते, कहानी सुनाते या वैज्ञानिक प्रयोग सिखाते अक्सर देखे जाने लगे।

1969 में, अपने शिष्य, भतीजे एवं उभरते हुए वैज्ञानिक श्री पंचरत्नम् की आकस्मिक मृत्यु ने श्री रमन को पूरी तरह तोड़ दिया और 21 नवम्बर 1970 की सुबह वे इहलोक से विदा हो गये लेकिन उनके आदर्श और कार्य, पीढ़ियों के लिए प्रेरणा बने रहेंगे।

(पुस्तक अंश)

राम शरण दास 2 अप्रैल 1944 को मुजफ्फरनगर मे जन्में। मेरठ विश्वविद्यालय से एम.एस-सी एवं दिल्ली विश्वविद्यालय से बी.एड. और एम.एड. किया। सीबीएसई, एनसीईआरटी, एनआईओएस तथा इग्नू के लिये आपने विज्ञान पुस्तकों का लेखन किया। विज्ञान लेखन के अतिरिक्त आपने अनुवाद के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किये हैं। व्हिट्टेकर पुरस्कार, राजीव गांधी राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान मौलिक लेखन पुरस्कार आदि से सम्मानित रामशरण दास ने कई विश्व प्रसिद्ध विज्ञान कथाओं तथा उपन्यासों का संक्षिप्तिकरण किया। उक्त पुस्तक का उद्‌देश्य उभरते युवा मस्तिष्कों को वैज्ञानिकों, विज्ञान-विधियों, वैज्ञानिक आविष्कारों औरउनके समाज पर प्रभावों आदि के विषय में और अधिक अध्ययन करने की प्रेरणा देना है जिससे वे वैज्ञानिक ज्ञान संपन्न समाज के निर्माण के लिए संकल्प लें।

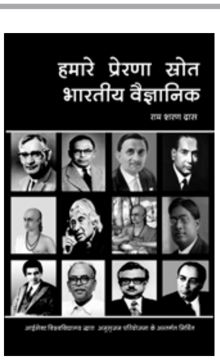

लिनक्स : एक आधुनिक सिस्टम

रवि शंकर श्रीवास्तव

कम्प्यूटर चलाते हुए उसके विविध अवयवों में तारतम्य बिठाने के लिए एक आपरेटिंग सिस्टम की आवश्यकता होती है। लिनक्स भी एक आधुनिक आपरेटिंग सिस्टम है। यह बहुत कुछ यूनिक्स आपरेटिंग सिस्टम के समतुल्य है, और आमतौर पर लगभग इसके सारे कमांड यूनिक्स आपरेटिंग सिस्टम के अनुरूप ही हैं। लिनक्स की लोकप्रियता को समझने के लिए हमें तीसेक साल पीछे लौटना होगा। उस वक़्त की कल्पना करनी होगी जब कम्प्यूटर घर या स्टेडियम के आकार के होते थे। इन कम्प्यूटरों के आकार के साथ तो घनघोर परेशानी थी ही और भी बड़ी मुश्किल यह थी कि हर कम्प्यूटर पर एक अलग आपरेटिंग सिस्टम होता था। सॉफ्टवेयर अक्सर फरमाइशी होते थे और ज़रूरी नहीं कि एक तंत्र पर चलने वाला सॉफ्टवेयर किसी और पर चल जाए। यानी कि एक तंत्र पर काम करने का यह मतलब कतई नहीं था कि आप बाक़ी पर भी काम कर पाएँगें। यह प्रयोक्ताओं और प्रबंधकों दोनों के लिए सिरदर्द था। तब कंप्यूटर काफ़ी महंगे भी थे और मूल ख़रीदारी कर लेने के बाद उस पर काम करना सीखने के लिए अच्छे-ख़ासे त्याग की ज़रुरत होती थी। सूचना प्रौद्योगिकी पर कुल लागत कमर तोड़ होती थी। चूँकि तकनीकी विकास हुए नहीं थे इसलिए लोगों को भारी-भरकम और ख़र्चीली मशीन के साथ एक दशक और गुज़ारना पड़ा 1969 में बेल लैब्स की प्रयोगशाला में डेवलपरों के एक दल ने सॉफ़्टवेयर की आपसी संवादहीनता के मसले पर काम करना शुरू किया। उन्होंने एक नए प्रचालन तंत्र का निर्माण किया जो सरल व सौम्य दोनों था। इसे असेंबली कोड में न लिखकर 'सी' प्रोग्रामिंग भाषा में लिखा गया। इसकी नकल संभव थी। बेल लैब्स के डेवलपरों ने इस प्रोजेक्ट को ‘यूनिक्स’ कहकर पुकारा।

इसकी कोड-नकल तंत्र अहम इसलिए थी, क्योंकि तब तक तमाम व्यावसायिक प्रचालन तंत्र ख़ास तंत्र के ख़ास कोड में ही लिखे जाते थे- दूसरी ओर यूनिक्स को उस ख़ास कोड के एक छोटे से टुकड़े की ज़रुरत होती थी, जिसे आजकल सामान्यत कर्नेल कहते हैं। यूनिक्स का आधार बनने वाले इस कर्नेल को हर कंप्यूटर तंत्र में थोड़ी फेर-बदल के साथ लगाया जा सकता था- प्रचालन तंत्र सहित सारी कार्य-प्रणालियाँ विकसित प्रोग्रामिंग भाषा यानी कि ‘सी’ में लिखित इस कर्नेल के इर्द-गिर्द बुनी गई थीं। यह भाषा ख़ास तौर पर यूनिक्स तंत्र के निर्माण के लिए रची गई थी। इस नई तकनीक का इस्तेमाल करके विभिन्न तरह के हार्डवेयर पर चलने वाले प्रचालन तंत्र का विकास करना ज्यादा आसान हो गया। सॉफ्टवेयर विक्रेताओं ने इसको फ़ौरन अपना लिया, क्योंकि अब वे बड़े आराम से दस गुना ज्यादा बिक्री करने की स्थिति में थे। अजीबोग़रीब स्थितियाँ पैदा होने लगीं अलग-अलग विक्रेताओं से ख़रीदे गए कंप्यूटर एक ही नेटवर्क में आपस में बातचीत करने लगे, या विभिन्न तरह की मशीनों पर काम करने वाले लोग बिना किसी अतिरिक्त शिक्षा के मशीनें अदल-बदल कर काम करने लगे।

अगले दो दशक भर यूनिक्स का विकास होता रहा बहुत सारी चीज़ें संभव होती चली गईं और सॉफ्टवेयर विक्रेताओं ने अपने उत्पादों में यूनिक्स के लिए नई चीज़ें जोड़ीं। यूनिक्स का एक संस्करण ‘एससीओ यूनिक्स’ एक प्रसिद्ध यूनिक्स ब्रांड बन गया। शुरु में यूनिक्स विशालकाय माहौल में मेनफ़्रेम और मिनी कंप्यूटर के साथ ही दिखते थे; ग़ौरतलब है कि पीसी या निजी कंप्यूटर तब ‘माइक्रो’ कंप्यूटर कहे जाते थे। यूनिक्स को हाथ लगाने का मौक़ा किसी विश्वविद्यालय या किसी बड़े व्यावसायिक घराने में काम करने वालों को ही मिल पाता था। लेकिन छोटे कंप्यूटर भी बनने लगे थे और 80 के दशक के अंत तक कई लोगों के पास घरेलू कंप्यूटर आ गए थे। उस समय तक पीसी के लिए वैसे तो यूनिक्स के कई संस्करण मौजूद थे, लेकिन उनमें से कोई भी मुक्त नहीं था। लिनक्स के जन्म की कथा रोचक है। सन 1991 में फ़िनलैंड में हेलसिंकी विश्वविद्यालय के एक विद्यार्थी लिनुस टोरवाल्ड जो कि यूनिक्स के छोटे संस्करण मिनिक्स से प्रभावित थे, इसी तरह का एक छोटा, मुक्त आपरेटिंग सिस्टम बनाना चाहते थे उन्होंने एक समाचार समूह को अपना यह संदेश भेजा जो बाद में बेहद मशहूर हुआ-

‘‘सभी मिनिक्स प्रयोक्ताओं को मेरा नमस्कार। मैं 386/(486) एटी के लिए एक (मुक्त) आपरेटिंग सिस्टम; सिर्फ़ शौकिया, और ये न तो विशाल होगा और न ही ग्नू जैसा व्यवसायिक बना रहा हूँ। इस पर मैं वैसे तो अप्रैल से काम कर रहा हूँ, पर ये अभी अभी कुछ काम लायक

बन पाया है। मैं हर किस्म के फ़ीडबैक का स्वागत करूँगा - कि आप मिनिक्स - क्योंकि मेरा आपरेटिंग सिस्टम उसी के जैसा है; फाइल तंत्र के वैसे ही भौतिक खाका जैसे; प्रायोगिक कारणों की खातिर जैसे इस सिस्टम में और कौन से फ़ीचर पसंद करना चाहेंगे। मैंने इस पर बाश और जीसीसी चलाया है, और यह बढ़िया चलता दिखाई दे रहा है। तमाम सुझावों का स्वागत है, हालाँकि मैं ये वादा नहीं करता कि मैं सारी मांगें पूरी कर सकूँगा।

-लिनुस टोरवाल्ड''

पुनश्चः और, यह निःशुल्क है, इसमें मल्टीथ्रेडेड फाइल सिस्टम है। यह उतना छोटा भी नहीं है जिससे यह संभवतः एटी सिस्टम से कम पर नहीं चलेगा। अभी बस इतना ही। उन्होंने समूह पर ओपन सोर्स के तहत इसका कोड भी उपलब्ध कर दिया। देखते ही देखते कम्प्यूटर प्रयोक्ताओं तथा डेवलपरों ने इस नए आपरेटिंग सिस्टम में रुचि लेनी शुरु कर दी और इसके नित्य नए संस्करण निकलने लगे, इसमें बग (दोष) सुधार होने लगे, शीघ्र ही लिनक्स आपरेटिंग सिस्टम एक परिपूर्ण आपरेटिंग सिस्टम बन गया जो हर मामने में ठोस है। अनुमान किया जाता है कि इंटरनेट पर सर्वरों का अधिकांश हिस्सा लिनक्स आपरेटिंग सिस्टम पर निर्भर है। लिनक्स का प्रतीक चिह्न पेंगुइन है। एक छोटा सा प्यारा सा पेंगुइन। इस प्रतीक के चुने जाने के बारे में भी कई रोचक कहानियाँ प्रचलित हैं। एक कहानी ये है कि एक प्रवास के दौरान एक पेंगुइन ने लिनुस को चोंच मार दिया था।

वैसे, स्वयं लिनुस टोरवाल्ड ने इस प्यारे पेंगुइन प्रतीक को अपनाने के बारे में अपने तर्क दिए हैं कि विंडोज जैसे आपरेटिंग सिस्टम के प्रतीक चिह्न सिर्फ़ प्रतीक चिह्न भर हैं। जबकि लिनक्स का प्रतीक चिह्न जीवंत है, और आप लिनक्स प्रतीक को विविध आयामों में मसलन किसी कम्प्यूटर पर काम करते हुए, या किसी आंदोलन का झंडा उठाए हुए भी दिखा सकते हैं।आधुनिक लिनक्स वितरण जैसे कि उबुन्टुए न सिर्फ़ विंडोज जैसे ही सरल हैं, बल्कि लिनक्स के ऐसे लाइव संस्करणों को उन्नत कम्प्यूटरों पर सीधे ही सीडी/डीवीडी से बिना इंस्टॉल किए, उनकी पूरी विशेषताओं के साथ चलाया जा सकता है।

लिनक्स में क्या कुछ नहीं है। लिनक्स में सब कुछ है। प्रोग्रामिंग से लेकर वर्ड प्रोसेसिंग और एकाउंटिंग तक सबकुछ। और इनमें से अधिकांश मुफ्त और मुक्त। कोई अच्छा प्रोग्रामर जिस भी चीज की इच्छा रख सकता है, वह सभी यहाँ है- कम्पाइलर, लाइब्रेरियाँ, विकास व डिबगिंग के उपकरण। ये पैकेज हरेक मानक लिनक्स वितरण के साथ आते हैं। सी कम्पाइलर निःशुल्क मिलता है, सभी प्रलेखन व दस्तावेज भी हैं, और तुरंत-फुरंत शुरुआत करने के लिए उदाहरण भी मौजूद रहते हैं। चलने-चलाने में यह यूनिक्स जैसा ही लगता है, और यूनिक्स से लिनक्स की ओर जाना बहुत ही सरल है। इसके प्रसिद्ध व प्रचलित विंडो मैनेजरों-गनोम व केडीई के जरिए लिनक्स का अनुभव विंडोज जैसा ही होता है और कुछ मामलों में इसमें अंतर्निर्मित अतिरिक्त सुविधाएँ हासिल होती हैं।

लिनक्स के शुरुआती दौर में, तंत्र का इस्तेमाल शुरू करने के लिए विशेषज्ञ होना तो लगभग लाज़िमी ही था। जिन लोगों ने लिनक्स पर महारत हासिल कर ली थी वे अपने आपको बाकी 'नेमते' (सामान्य उपयोक्ताओं) से बेहतर मानते थे। नौसिखुओं को (RTFM) (बेटा पहले मैनुअल तो पढ़) कह के हड़काना आम बात थी। मैनुअल तो हर तंत्र में थे लेकिन उन्हें ढूँढना कठिन काम था, और यदि वे मिल भी गए, तो वे इतने क्लिष्ट होते थे कि नए प्रयोक्ता सीखने के प्रति बिल्कुल हतोत्साहित हो जाते थे। मगर अब परिस्थितियाँ ऐसी नहीं रहीं। यदि आपमें सीखने का माद्दा है, नई चीज़ों, नई तक्नॉलॉजी के प्रति आकर्षित होते हैं तो लिनक्स को अब आप सामान्य प्रयास से न सिर्फ़ जल्द ही सीख सकते हैं, बल्कि उसमें महारत हासिल कर सकते हैं।

(पुस्तक अंश)

रविशंकर श्रीवास्तव की मूल पहचान एक ब्लॉगर की है। 5 अगस्त 1958 को राजनांदगांव में जन्में रविशंकर श्रीवास्तव अभियांत्रिकी में स्नातक हैं। लिनक्स पॉकेट गाइड, आस-पास की कहानियां आदि विज्ञान पुस्तकों के साथ आपने अन्य विषयों की पुस्तकें भी लिखी हैं। माइक्रोसॉफ्ट भाषा इंडिया सर्वश्रेष्ठ हिन्दी ब्लॉग, माइक्रोसॉफ्ट मोस्ट वेल्यूएबल प्रोफेशनल्स, अभिव्यक्ति आर्गटेक्नॉलॉजी, छत्तीसगढ़ गौरव सम्मान, आईटी मंथन आदि सम्मान से सम्मानित रविशंकर श्रीवास्तव की ब्लॉग और साईट्स निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका है। लिनक्स के प्रयोग में समस्याओं के समाधान के लिए यह पुस्तक लिखी गई है। यदि किसी विशिष्ट समस्या का समाधान नहीं भी मिलेगा तो इस पुस्तक में दी गई दर्ज़नों इंटरनेट कड़ियां मददगार होंगी। पुस्तक को बेहद प्रचलित उबुन्टु लिनक्स को ध्यान में रखकर लिखा गया है, मगर इसके लगभग सारे कमांड्स और तरकीबें अन्य दूसरे लिनक्स तंत्रों पर भी बखूबी लागू होंगी।

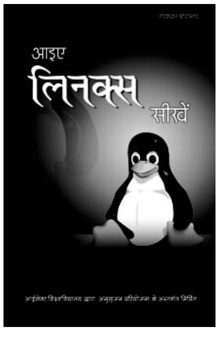

बिन बिजली सब सून

डॉ. जाकिर अली 'रजनीश'

बिल्लैचपुरा की लाइट गये हुए पांच मिनट से अधिक व्यतीत हो चुके थे। महक बेचैनी से प्रयोगशाला में इधर से उधर टहल रही थी। उसे समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे और क्या नहीं। कभी वह मॉनीटर को देखती, कभी 'ह्यूमन ट्रांसमिशन मशीन' की ओर और कभी दीवार में लगी घड़ी को। वह टहलती हुई इनवर्टर के पास पहुंची। इनवर्टर पिछले कई दिनों से गड़बड़ कर रहा था। एक बार प्रोफेसर रामिश ने इनवर्टर को ठीक कराने के लिए महक से कहा भी था। पर लाइट कभी जाती नहीं थी और जाती भी थी, तो दो चार मिनट में ही आ जाती थी। यही सोचकर महक इस बात को टाल गयी थी। काश, उसने प्रोफेसर साहब की बात समय पर मान ली होती।

अचानक महक को याद आया कि यहां पास में ही कोई बिजली का मिस्त्री रहता है। उसे बुला कर दिखाया जाए, शायद बात बन जाए। यही सोचती हुई वह ड्राइवर को बुलाने के लिए बाहर निकली। पर ड्राइवर कार के पास से गायब था। महक ने गेट के बाहर निकल इधर-उधर देखा, पर ड्राइवर उसे कहीं नजर नहीं आया। खीझकर वह वापस प्रयोगशाला में लौट गयी। तभी महक को ध्यान आया कि ड्राइवर ने अपना मोबाइल नम्बर उसकी डायरी में नोट कराया था। उसने जल्दी से पर्स खोलकर डायरी निकाली और उसके पन्ने पलटने लगी। जैसे ही उसने 'आर' अक्षर का पन्ना खोला, सामने ही राम सुमेर ड्राइवर का नम्बर लिखा हुआ था। महक ने मोबाइल उठाया और उसका नम्बर मिलाने लगी।

'इस रूट की सभी लाइनें व्यस्त हैं। कृपया थोड़ी देर बाद डायल करें' संदेश सुनकर महक क्रोध से फट पड़ी, 'हद्द हो गयी! ये मोबाइल कंपनियां भी कनेक्शन पे कनेक्शन बांटती चली जाती हैं, पर सुविधा के नाम पर ठेंगा। इनके खिलाफ ट्राई को कड़ी से कड़ी कार्यवाही करनी चाहिए।'

सहसा महक को अपने भाई की याद आई। वह धीमे से बुदबुदाई, 'पता नहीं भइया अभी घर से निकले भी हैं अथवा नहीं?'

महक ने विनय का नंबर डायल किया। संयोग से पहली बार में नम्बर मिल गया। उधर से 'हैलो' की परवाह किये बिना ही वह तेजी से बोल पडी, 'भैया, आप कहां हैं? लाइट अभी तक नहीं आई।'

'अरे, तो लाइट वाले मेरे नौकर हैं क्या?' महक की बात सुनकर विनय को भी गुस्सा आ गया।

'सॉरी भैया।' महक को अपनी गल्ती का एहसास हुआ, 'पर मैं क्या करूं भैया, मेरी कुछ समझ में ही नहीं आ रहा है। मुझे तो डर लग रहा है कि अगर ये कम्प्यूटर भी बंद हो गया, तो फिर क्या होगा?' कहती हुई महक रुंआसी हो गयी और उसका गला रुंध गया।

'थोड़ा धीरज से काम लो महक।' विनय ने समझाते हुए कहा, 'लाइट जाने की वजह सप्लाई नहीं, बल्कि घर के पास वाले खम्भे के तार का टूटना है। अभी हम लोग लाइनमैन को लेकर जाते हैं और तार को ठीक करवाते हैं।'

'ठीक है भैया।'

'और हां, तुम चाहो तो कम्प्यूटर का मॉनीटर ऑफ कर दो।'

'लेकिन इससे तो कम्प्यूटर का प्रोफेसर के शरीर से सम्पर्क ही कट जाएगा।'

'अरे पगलेट, मैं कम्प्यूटर बंद करने के लिए नहीं कह रहा हूं, मैं तो सिर्फ स्क्रीन को ऑफ करने के लिए कह रहा हूं। इससे तुम्हारे कम्प्यूटर का प्रोफेसर साहब के शरीर से सम्पर्क भी बना रहेगा और यूपीएस की बैटरी की खपत भी कम होगी।'

'ओह, थैंक्यू भैया। ये तो मैंने सोचा ही नहीं था।'

महक ने झट से मोबाइल का कनेक्शन डिस्कनेक्ट किया और मॉनीटर पर नजर दौड़ाई। स्क्रीन पर चैम्बर में कैद प्रोफेसर का तरंग स्वरूप स्पष्ट दिखाई दे रहा था। उसने राहत की सांस ली और मॉनीटर को ऑफ कर दिया। बिजली विभाग के सब स्टेशन में जब पन्द्रह लड़कों का हुजूम एक साथ पहुंचा, तो वहां खलबली मच गयी। उस समय वहां पर दो लाइनमैन और एक चौकीदार ही मौजूद थे। चौकीदार ने उन लोगों के तेवर देख कर ढ़िलाई बरतने में ही भलाई समझी। वह बोला, 'बताएं सर, आप लोगों का कैसे आना हुआ?'

'यहां का जे.ई. कौन है?' विनय ने कड़क स्वर में पूछा।

'जे.ई. तो सिंह साहब हैं, पर वो इस समय हैं नहीं।' चौकीदार ने पहले से रटा रटाया जवाब दिया। तभी एक दुबला-पतला सा लाइनमैन अंदर से निकल कर सामने आया। वह बोला, 'हां, बताइए क्या काम है?'

'बिल्लौचपुरा में तार टूट गया है, उसे ठीक करना है, फौरन।'

'ठीक है, आपकी कंप्लेंट लिख लेते हैं। थोड़ी देर में ठीक हो जाएगी।' लाइनमैन ने टरकाने वाला जवाब दिया।

'हम लोग कम्प्लेन लिखवाने नहीं आए हैं। वहां ट्रांसफार्मर के पास से तार टूटा है। तुम अभी चलो और उसे ठीक करो।' विनय ने डपटते हुए कहा।

'अभी नहीं जा सकते, यहां पर आदमी नहीं हैं।' लाइनमैन भी अपनी अकड़ दिखाने लगा।

विनय कुछ बोलने वाला था कि तभी उसके साथी राघवेन्द्र ने उसे टोका, 'विनय, मैं बात करता हूं।' वह लाइन मैन को सम्बोधित करके बोला, 'देखो भई, मामला ये है कि वहां पर एक प्रोफेसर साहब की जिदंगी खतरे में हैं। वे एक मशीन के अंदर बंद हो गये हैं। अगर थोड़ी देर में लाइट नहीं आई, तो अनर्थ हो जाएगा। और अगर उन्हें कुछ हो गया, तो फिर तुम खुद समझ सकते हो कि क्या होगा। वे बहुत बड़े साइंटिस्ट हैं, भारत सरकार तक उनकी पहुंच है। उनको एक खरोंच आने का भी मतलब है..' कहते हुए राघवेन्द्र ने अपनी बात अधूरी छोड़ दी। मामले की गंभीरता को समझते हुए लाइनमैन ने हथियार डाल दिये। वह बोला, 'अगर ऐसी बात थी, तो आप लागों को पहले बताना चाहिए था।'

'तो अब तो बता दिया न?' विनय ने आंखें तरेरीं, 'अब चलो।'

'साहब, हम लोग तो जनता की सेवा करने के लिए ही बैठे हैं। एक मिनट रुकिए, हम अपना सामान ले आएं, फिर चलते हैं।' कहते हुए लाइनमैन अंदर की ओर चला गया।

'हम तो जनता की सेवा करने के लिए बैठे हैं।' विनय ने लाइनमैन की बात उसी के टोन में दोहराई, 'बेटा जरा जल्दी कर, वर्ना तुम्हारी सेवा तो फिर हम लोग कायदे से करेंगे।' लगभग दो मिनट के बाद जब लाइनमैन लौटा, तो उसके साथ एक और आदमी था। लाइनमैन ने दाहिने हाथ में एक बोरी का बना हुआ बड़ा सा थैला ले रखा था। वह पास आकर बोला, 'चलिए साहब।'

'ये कौन है?' विनय ने लाइनमैन के साथ आए दूसरे व्यक्ति की ओर इशारा करते हुए पूछा, 'ये भी चलेगा क्या?'

'हां साहब, दो लोगों की जरूरत तो पड़ेगी ही।'

'ठीक है, चलो दोनों लोग एक-एक मोटरसाइकिल पर बैठ जाओ।' कहते हुए विनय ने अपनी मोटर साइकिल स्टार्ट कर दी।

दोनों लाइनमैन एक-एक मोटरसाइकिल पर सवार हो गये। उसके बाद मोटरसाइकिलों का पूरा हुजूम बिल्लौचपुरा की ओर कूच कर गया।

(प्रस्तुत पुस्तक की कहानी)

डॉ. जाकिर अली 'रजनीश' का जन्म 1 जनवरी 1975 को लखनऊ में हुआ। हिन्दी में स्नात्कोत्तर, पी.एच-डी. उपाधि प्राप्त की और इन दिनों राज्य कृषि उत्पादन मंडी परिसर उत्तरप्रदेश में कार्यरत हैं। आपने दूरदर्शन तथा आकाशवाणी के लिये भी लेखन किया। वैज्ञानिक उपन्यास, विज्ञान कथा संग्रह, पटकथा लेखन पुस्तक, वैज्ञानिकों की जीवनी सहित आपने अनेक वैज्ञानिक पुस्तकों का सृजन किया। आपको जर्मनी सहित देश-विदेश दो दर्जन संस्थाओं से सम्मानित - पुरस्कृत किया गया है। पुस्तक में नौ बाल विज्ञान कथाएँ एवं ह्यूमन ट्रांसमिशन नामक एक लधु बाल उपन्यास सम्मिलित हैं। विज्ञान कथाओं के माध्यम से समाज में व्याप्त अंधविश्वासों का खुलासा बड़े रोचक तरीके से किया गया है जबकि उपन्यास में एक वैज्ञानिक के स्थानांतरित होने का सजीव चित्रण किया गया है।

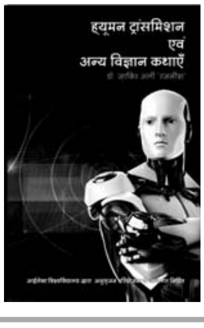

औषधि का संश्लेषण

डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती

बेटा : पापा, औषधियों को कृत्रिम रूप से कैसे बनाते हैं?

पापा : बेटे, पहले वैज्ञानिक यह पता लगाते हैं कि किसी औषधि की संरचना क्या है? वह किन पदार्थों से बनी है? पौधों और जीवों में वह किस तरह बनती है? फिर उस औषधि को उसे बनाने वाले पदार्थों द्वारा, प्रयोगशाला में बनाने की विधि ढूँढ़ी जाती है। बाद में इस विधि से फेक्ट्रियों में बड़ी मात्रा में वह औषधि बना ली जाती है। इस प्रकार औषधि-पदार्थों का निर्माण 'औषधियों का संश्लेषण' कहलाता है!

बेटा : यानी आज अधिकांश औषधियाँ फैक्ट्रियों में संश्लेषित की जा रही हैं?

पापा : हाँ बेटे, शायद तुम्हें पता न हो कि पेनीसिलीन एक अत्यंत महत्वपूर्ण ऐंटिबायोटिक यानी प्रतिजैविक औषधि है। यह दूसरे विश्व युद्ध के हजारों-लाखों घायलों की जान बचाने वाली एक 'वंडर ड्रग' साबित हुई थी। इस औषधि की खोज ऐलेक्जेंडर फ्लेमिंग ने सन् 1929 में एक फफूंद से निकले पीले द्रव के रूप में की थी। दूसरे विश्व युद्ध के समय पेनेसिलिन के संश्लेषण की विधि फ्लोरे और चेन ने खोज निकाली। देखते-देखते अमेरिका और इंग्लैंड में पेनीसिलीन का औद्योगिक उत्पादन शुरू हो गया। 1944 तक यह औषधि आम जनता को उपलब्ध होने लगी। सन् 1945 में ऐलेक्जेंडर फ्लेमिंग को फ्लोरे और चेन के साथ नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। यह पहली प्रतिजैविक औषधि थी, जो संश्लेषित की गयी।

बेटा : पापा, ऐंटीबायोटिक औषधियों में और किन औषधियों का संश्लेषण किया जा रहा है ?

पापा : बेटे, सच तो यह है कि आज वैज्ञानिक प्रगति ने रसायनशास्त्रियों को यह ज्ञान सौंप दिया है कि मनुष्य के शरीर के अन्दर, विभिन्न अभिक्रियाएँ किस प्रकार होती हैं और कोई औषधि इन अभिक्रियाओं पर किस प्रकार से प्रतिक्रिया करती हैं? इन अनुसंधानों ने खतरनाक से खतरनाक रोगों के लिये कारगर औषधियों का संश्लेषण संभव बना दिया है। इसके फलस्वरूप अनेक रोग 'असाध्य' से 'साध्य' की श्रेणी में आ गये हैं और बाकी रोगों के लिये तेजी से प्रयत्न चल रहे हैं। अनेक ऐंटिबायोटिक औषधियाँ बाजार में आ रही हैं और हर एक पहली से बेहतर और अधिक व्यापक होने का दावा करती है!

बेटा : पापा, ये ऐंटिबायोटिक औषधियाँ तो जीवाणुओं को मारती हैं न?

पापा : बेटा, सही कहें तो ये सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा पैदा किये जाने वाले वे पदार्थ होते हैं, जो दूसरे सूक्ष्म जीवाणुओं की वृद्धि रोककर उन्हें मार देते हैं। टाइफाइड, टीवी, टिटनेस जैसे कई रोग हवा, मिट्टी, पानी, वनस्पति जगत आदि में पाये जाने वाले बैक्टीरिया से उत्पन्न होते हैं। ऐसे ही दाद और एथलीट्स फुट जैसी बीमारियाँ फंगस या फंफूद से पैदा होती हैं जबकि सर्दी, रैबीज, एड्स, चिकनपॉक्स, इन्फ्लुऐंजा जैसे रोग वायुमंडल में मौजूद वायरस से उत्पन्न होते हैं।

बेटा : पापा, ये वायरस भी क्या सूक्ष्म जीवाणु होते हैं?

पापा : बेटे, ये न तो वनस्पति के अंतर्गत आते हैं और न ही प्राणी जगत के। फिर यहाँ यह जान लेना जरूरी है कि एक ऐंटिबायोटिक औषधि सभी जीवाणुओं को मारने में सक्षम नहीं होती। ऐंटिबायोटिक औषधियों की कई श्रेणियाँ हैं जो अलग-अलग रोगों पर कारगर पायी जाती हैं। जैसे, पेनीसिलिन गले की खराबी, सिफलिस गनोरिया, निमोनिया, मस्तिष्क ज्वर आदि रोगों में कारगर होती है। जबकि स्ट्रेप्टोमाइसिन तपेदिक के लिये एक महत्वपूर्ण औषधि है। ऐसे ही सल्फोनामाइड से बनने वाली सल्फा औषधियाँ मलेरिया आदि रोगों के लिये महत्वपूर्ण हैं।

माँ : जब अपने अमित को टायफॉइड हुआ था तब तो क्लोरेम्फेनिकॉल दी गयी थी न?

पापा : हाँ, टायफॉइड के लिये क्लोरेम्फेनिकॉल एक बहुत कारगर औषधि है!

बेटा : पापा, ये 'वाइडस्पेक्ट्रम ऐंटिबायोटिक' औषधियाँ भी तो होती हैं?

पापा : हाँ बेटे, ये वे औषधियाँ होती हैं, जो अनेक रोगों पर प्रभावशाली होती है। जैसे- टेट्रासाइक्लिन, सिप्रोफ्लॉक्सिन आदि। सिप्रोफ्लॉक्सिन श्वास नली के रोगों, मस्तिष्क ज्वर, टायफॉइड, कंजक्टिवाइटिस, मूत्र नली, टॉन्सिल आदि के संक्रमणों में उपयोगी औषधि है।

माँ : क्या कोई ऐसी औषधि नहीं है जो आदमी के झक्कीपन का इलाज कर सके?

पापा : क्या मतलब?

माँ : मतलब यह कि हर छुट्टी के दिन क्लास लगा लेना झक्कीपन ही तो है!

पापा : लो हद हो गयी! तुम्हें यह झक्कीपन लग रहा है?यह नहीं लगता कि इससे हमारे अमित की, और तुम्हारी भी जनरल नॉलेज कितनी बढ़ रही है?

माँ : जनरल नॉलेज तो ठीक पर कभी चैन से भी बैठना चाहिये!

पापा : शायद तुम्हें लगता है हमारी यह चर्चा हमें थका देती है! पर सच तो यह है, हमारी यह चर्चा हमारे लिए एक बड़ा रिक्रिएशन है! क्यों अमित तुम क्या कहते हो? यह तुम्हें थकाती है या तुम्हारा मनोरंजन करती है?

बेटा : थकने की तो कोई बात ही नहीं है! यह चर्चा काफी मनोरंजक होती है। फिर यह सारी चर्चा हमारे क्लास रूम कोर्स का ऐक्स्टेंशन ही तो होती है!

पापा : सुना? 'यह चर्चा तो बड़ी मनोरंजक होती है।' वैसे भी हर छुट्टी की शाम तो हम घर के बाहर ही बिताते है!

माँ : तुम्हें अपनी बात मनवाना अच्छी तरह आता है।

पापा : (हँसी) चलो तुमने माना तो सही, मैं एक अच्छा शिक्षक हूँ!

माँ : (हँसते हुए) मैं क्या वो तो सभी मानते हैं!

बेटा : पापा, मम्मी जो सिरदर्द की गोली लेती हैं, वो?

पापा : बेटे, दर्द दूर करने के लिये उपयोग में लायी जाने वाली औषधियाँ, एनाल्जेसिक या दर्दनाशक औषधि कहलाती हैं। इनमें प्रमुख हैं- ऐस्प्रिन, ऐनालजिन, नोबालजिन आदि। इनके अतिरिक्त, मार्फीनमेरीजुएना, कोडीन और हेरोइन आदि 'नारकोटी' कही जाने वाली औषधियाँ भी दर्द दूर करने के लिये उपयोग में लायी जाती हैं। बेटे, तुम्हें शायद पता हो, सबसे सामान्य दर्द निवारक औषधि ऐस्प्रिन का रासायनिक नाम ऐसीटिल सेलिसिलिक अम्ल है।

बेटा : पापा, यूकेलिप्टिस पेड़ की पत्तियों में भी तो यही यौगिक होता है?

पापा : नहीं बेटे, यूकेलिप्टिस की पत्तियों में पाया जाने वाला दर्द निवारक पदार्थ मैथिल सेलिसिलेट होता है, यही पदार्थ दर्द दूर करने वाली क्रीमों की ट्यूबों में उपयोग में लाया जाता है!

बेटा : और वो बुखार उतारने वाली दवाइयाँ?

पापा : वे औषधियाँ जो बुखार में ताप कम करने के लिये उपयोग में लायी जाती हैं वे ज्वरनाशक, यानी 'एन्टीपाइरेटिक्स' कहलाती हैं। जैसे क्वीनाइन, ऐसीटानिलाइड, फिनेसिटिन, पेरासिटिमाल, ऐन्टीपायरीन, पाइरेमिडॉन, कोडोपायरीन आदि -आदि!

(पुस्तक अंश)

डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती का जन्म 11 जुलाई 1937 को ग्वालियर में हुआ। एम.एस-सी., पी.एच-डी., साहित्य विशारद और धर्म विशारद उपाधि प्राप्त डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती के 100 शोध पत्र, चार रिव्यू प्रकाशित हैं। आपके नेतृत्व में 12 पी.एच-डी. की गईं। विज्ञान लेखन के अतिरिक्त आपका हिन्दी साहित्य लेखन में महत्वपूर्ण योगदान है। विज्ञान और मानव, कथा द्रव्य की, प्राचीन भारत में वैज्ञानिक चिंतन आपकी चर्चित कृतियां हैं। विश्वविद्यालयों के लिये आपने पाठ्य-पुस्तक लेखन किया। श्रेष्ठ विज्ञान शिक्षक, श्रेष्ठ विज्ञान पाठयपुस्तक लेखक, फीचर लेखक, शंकरदयाल शर्मा सृजन सम्मान, अनुसृजन सम्मान, तैलंग कुलम पुरस्कार और विभूति सम्मान से अलंकृत डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती ने इस पुस्तक में द्रव्य की अवस्थाओं का गहन अध्ययन किया है। रसायनशास्त्र द्रव्य का विज्ञान है। द्रव्य क्या है? यह पदार्थों में किस रूप में उपस्थित है? रसायन के क्षेत्र और महत्व को यदि आँका जाये तो हम कहेंगे रसायन विज्ञान उन द्रव्यों का अनुसंधान करता है जिसके द्वारा ब्रह्मांड बना है। पुस्तक में संवाद शैली के माध्यम से दैनिक जीवन में उपयोग में आने वाली वस्तुओं का रसायन विज्ञान भली-भाँति समझाया गया है।

ग्रीन बेबी

विजय चितौरी

आम मानव जन्तु विज्ञान की भाषा में 'होमोसैपियन्स' कहलाता है। लेकिन जूली और राबर्ट होमोसैपियन्स नहीं हैं। ये दोनों जीन इंजीनियरी द्वारा विकसित मानव की नई प्रजाति 'होमोमार्स' से संबंधित हैं। होमोमार्स शब्द मंगल ग्रह (मार्स) से बना है। इस प्रजाति के मानव हरे रंग के होते हैं। सिर को छोड़कर पूरा शरीर हरा होता है। ऐसा शरीर की त्वचा में क्लोरोप्लास्ट की उपस्थिति के कारण होता है। क्लोरोप्लास्ट की उपस्थित के कारण ऐसे मानवों की त्वचा सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में जल और कार्बन डाई-आक्साइड की मदद से भोजन 'कार्बोहाइड्रेड' का निर्माण करती हैं। जैसे पेड़ पौधों की पत्तियां करती हैं। खास बात यह है कि त्वचा द्वारा तैयार यह भोजन सीधे रक्त में मिल कर कोशिकाओं तक पहुंच जाता है। होमोमार्स के लिए यद्यपि पाचन तंत्र की आवश्यकता नहीं है फिर भी पाचन तंत्र उनके शरीर में मौजूद है और वे आम मानवों की तरह खाते पीते भी हैं।

होमोमार्स परियोजना इस सदी के तीसरे दशक से ही शुरू हो गयी थी। लेकिन सामाजिक संगठनों द्वारा इसका लगातार विरोध होता रहा। मानव भ्रूण के साथ जेनेटिक हेरफेर का सदैव विरोध हुआ है लेकिन वैज्ञानिक समाज के भी अपने तर्क हैं। उनके तर्क के अनुसार धरती का भविष्य अंधकारमय है। बढ़ते विश्व व्यापी प्रदूषण, आणविक हथियारों की होड़, सुनामी और केदारघाटी जैसी आपदायें तथा आकाशीय उल्का पिण्डों के किसी भी समय धरती से टकराने से धरती पर जीवन को गंभीर खतरा पैदा हो सकता है। ऐसे में समय रहते वैज्ञानिक समुदाय को सौर मण्डल में कहीं वैकल्पिक ठिकाना खोज लेना चाहिये। चन्द्रमा बेस कैम्प के रूप में इस्तेमाल हो सकता है। लेकिन स्वाभाविक ठिकाना नहीं हो सकता क्योंकि वहां वायुमण्डल नहीं है। मंगल पर वायुमण्डल है। लेकिन फिलहाल यह मानव के लिए उपयुक्त नहीं है। लेकिन लम्बे समय तक प्रयास के बाद यहां का वायुमण्डल बदला जा सकता है। इसके लिये वहां बस्ती बसानी पड़ेगी। वहां रहने वाले लोगों के लिए भोजन और पानी की व्यवस्था करनी होगी। ये चीजें धरती से वहां तक पहुंचाना संभव नहीं होगा। इसी समस्या के मद्देनजर ही मानवों की एक नई प्रजाति (होमोमार्स) की बात सामने आयी।

बहुत सारे तर्क वितर्कों के बाद ग्रीन बेबी तकनीक को 'राष्ट्र संघ' ने मान्यता देदी। लेकिन शर्त रखी कि इस प्रयोग के लिये निःसन्तान दम्पत्तियों का ही चयन किया जाय। ऐसा नियम बनाने के पीछे तर्क था कि इसी बहाने निःसन्तान दम्पत्तियों को सन्तान सुख भी मिल जायेगा। जूली के मां-बाप, नीरू और सोमा निःसन्तान दम्पत्ति थे। विवाह के कई वर्षों के बाद भी जब नीरू को कोई सन्तान नहीं हुई तो उसने सरकारी अस्पताल से संपर्क किया। वहां डाक्टर ने उन्हे निःसन्तान आदिवासी दम्पत्तियों के लिए 'नासा' की एक परियोजना की जानकारी दी। उसमें बताया कि परियोजना का लाभ लेने पर उन्हें सन्तान तो मिलेगी ही साथ-साथ आकर्षक पुरस्कार और सुख-सुविधाएं भी मिलेंगी। उसी डाक्टर की सलाह और प्रयास से सोमा और नीरू नई दिल्ली स्थित 'होमोमार्स बर्थ लेबोरेटरी' पहुंचाए गये। वहां नीरू और सोमा की गहन जांच की गयी। दोनों सन्तान उत्पन्न करने में अयोग्य पाये गये। तय हुआ की नीरू का क्लोन बनाया जाय और उसी क्लोन में जेनेटिक हेरफेर करके उसे होमोमार्स बेबी में बदला जाय। इस प्रकार नीरू की कोशिका से भ्रूण तैयार किया गया। फिर उक्त भ्रूण में जीन इंजीनियरी द्वारा पौधों का वह जीन डाला गया जिससे क्लोरोप्लास्ट नामक हरा पदार्थ पैदा होता है। उस कन्या भ्रूण ने उक्त जीन को स्वीकार कर लिया। इस तरह पैदा होने वाली जूली हरे रंग की हो गयी। आम प्रचलन में उसे 'ग्रीन बेबी' कहा जाता है।

इस तरह अस्पताल में जूली का जन्म हुआ लेकिन उसका बचपन गांव के वातावरण में बीता और जब वह पांच वर्ष की हो गयी तो उसकी प्रारंभिक शिक्षा दिल्ली के एक स्कूल में हुई जहां कुछ और ग्रीन बेबी थे। हाई स्कूल के बाद उच्च शिक्षा के लिए 'नासा' ने उसे तथा अन्य

ग्रीन बेबियों को अपने यहां बुला लिया। 'नासा' ने अपने विशाल कैम्पस में एक 'होमोमार्स काम्प्लेक्स' विकसित किया है। यहां दुनिया भर के विभिन्न अस्पतालों मे जन्माए होमोमार्स बच्चों को रखा जाता है। उनकी बढ़िया पालन-पोषण तथा शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था की जाती है। जूली और राबर्ट यहीं इसी काम्पलेक्स में साथ-साथ रहे और पढ़ाई-लिखाई किया। यौवनारम्भ के साथ उन दोनों में एक दूसरे के प्रति आकर्षण उत्पन्न हुआ। अब वे दोनों जीवन भर जीवन साथी के रूप में ही रहने का निश्चय कर लिया है। यद्यपि अभी वैवाहिक बन्धन में नहीं बंधे हैं। उन्हें इसकी कोई जरूरत भी महसूस नहीं होती। क्योंकि आजकल के खुले समाज में विवाह बन्धन एक पुरानी प्रथा के तौर पर ही जिन्दा है।

जूली और राबर्ट की तरह होमोमार्स काम्पलेक्स में चार जोड़े और हैं। फिलहाल मंगल पर जाने के लिए जूली और राबर्ट का ही चुनाव किया गया। चुनाव के लिए सभी जोड़ों का मनोवैज्ञानिक परीक्षण तथा उनके दमखम का परीक्षण किया गया था। जिसमें जूली ओर राबर्ट ही सफल हुए थे।

जूली इस समय राबर्ट के साथ अपने गांव 'सोनारी' में है। जब से वह यहां आयी है, गांव में जश्न का माहौल है। ग्रीन बेबी जूली को गांव वाले वनदेवी का अवतार मानते हैं। इस सम्मान के बावजूद जूली गांव में अन्य आदिवासी लड़कियों की तरह ही रहती है। उसने अपने को अन्य लड़कियों से कभी विशिष्ट नहीं समझा। बाहर की दुनिया में जूली भले ही तमाशा की वस्तु हो, लेकिन यहां सोनारी में उसे कौतूहल की निगाह से कोई नहीं देखता। वह इस गांव की बेटी है। हां, बेटियों में उसे विशेष सम्मानित दर्जा अवश्य प्राप्त है। इसके पीछे भी एक वजह है। वह यह कि यहां के आदिवासी समाज में जब किसी औरत को सन्तान नहीं होती तो वह किसी देवी या देवता की मनौती करती है। बाद में यदि संतान हुई तो उसका नामकरण उस देवी या देवता के नाम पर कर दिया जाता है। नीरू ने भी कई वर्षों तक सन्तान पाने के लिए वनदेवी की पूजा की थी। वह प्रत्येक मंगलवार को गांव के बाहर सोन नदी के तट पर स्थित पीपल वृक्ष के नीचे रखी वन देवी की मूर्ति के सामने दीपक जलाती थी और सन्तान के लिए प्रार्थना करती थी। जब नीरू नई दिल्ली के अस्पताल से नन्हीं सी हरी बच्ची को लेकर आयी तो लोगों को पक्का विश्वास हो गया कि वनदेवी ने स्वयं नीरू के गर्भ से जन्म ले लिया है। इसी लिए जूली को गांव के लोग 'वनदेवी' नाम से भी पुकारते हैं।

जब से जूली गांव आई है उसके स्वागत में रोज कोई न कोई कार्यक्रम आयोजित किया जाता है। जूली और राबर्ट भी जी भर के आदिवासी जीवन, जंगलों, पहाड़ों और प्राकृतिक दृश्यों का आनन्द ले रहे हैं। 'नासा' ने दोनों के लिए मल्पर टैक्सी की व्यवस्था की ही है। वे इसका भरपूर फायदा उठा रहे हैं। सुबह घर से निकलते है। आकाश में उड़ते हुए जंगल, पहाड़, नदी, नाले देखते हैं। जहां इच्छा होती है वहां जल में भी इसे उतार लेते हैं। आवश्यकता पड़ने पर सड़क पर वे इसे कार की तरह दौड़ाते भी हैं। रिहन्द झील घूमकर आज जब जूली घर लौटी तो मां नीरू ने बताया कि आज उन दोनों के सम्मान में 'करमा' रखा गया है। 'करमा' शब्द सुनते ही जूली प्रसन्नता से उछल पड़ी, 'वाह ! करमा तब तो मां बड़ा मजा आयेगा। आज राबर्ट को भी नचाऊंगी। शर्मीला है, डान्स नहीं करता।' मां नीरू हंस पड़ी। जल्दी-जल्दी वह घर के काम-काज निबटाने लगी।

आज पूर्णिमा की रात है। सोन का रेतीला तट दूर-दूर तक दूध से नहाया हुआ दिख रहा है। यहीं पर करम देवता के चबूतरे के सामने सारा सोनारी गांव एकत्र है। युवक-युवतियां बच्चे और सभी स्त्री- पुरुष। ज्यादातर के हाथों में मादल और डफले है। बीच-बीच में इन वाद्य यंत्रों पर हाथ फेर करके वे वातावरण को कोलाहल पूर्ण बना रहे है। एक किनारे दारू के कुछ मटके रखे हैं। लोग छक कर दारू पी रहे है और पिला रहे हैं। कइयों ने जूली और राबर्ट को भी उन घड़ों तक घसीटा। दोनों को पिलाने का प्रयास किया लेकिन दोनों ने मना कर दिया। 'फिर नाचोगी कैसे?' सवाल पर जूली ने कहा कि वह राबर्ट के साथ बिना नशे के ही नाचेगी।

(पुस्तक अंश)

1953 को चितौरी इलाहाबाद में जन्में विजय चितौरी एम.ए., बी.एस-सी., बी.एड. तक शिक्षित हो पूर्णकालिक लेखक रहे। पराई कोख, आपरेशन इंडिया, हमारा ब्रह्मांण, महान भारतीय वैज्ञानिक, अंतरिक्ष में चुनौती पूर्ण जीवन, मंगल पर जल और जीवन, स्वास्थ्य और आधुनिक जीवन तथा मौन पालन तकनीक सहित आपकी 12 अन्य बाल विज्ञान पुस्तकें प्रकाशित हैं। 'जीवों की उत्पत्ति' नामक पुस्तक के लिये उ.प्र. हिन्दी संस्थान द्वारा आपको पुरस्कृत किया गया। आपको देश भर में अन्यान्य संस्थाओं द्वारा सम्मानित किया गया। 'ग्रीन बेबी' एक वैज्ञानिक उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखक ने मानव की- मशीनों पर अतिनिर्भरता का दुष्परिणाम दिखाने का प्रयास किया है। यह पुस्तक रहस्य, रोमांच और ढेर सारी वैज्ञानिक जानकारियों से भरी हुई है तथा बाइसवीं सदी के वैज्ञानिक विकास का दिग्दर्शन कराती है।

रसोई विज्ञान

पुनीता मल्होत्रा

गरिमा, एगमार्क ISI मार्क जैसा प्रमाणीकरण है। याद है जब हम नया कुकर खरीद रहे थे तो माँ ISI मार्क चैक कर रही थी। रोहन की बात सुन गरिमा ने कहा, 'हाँ अब याद आया, हाँ भाई।'

दादी खाने की चीज़े खरीदने से पहले बहुत जरूरी है उसकी (expiry date) चैक करना। हमेशा लेबल देख कर खाद्य पदार्थ खरीदें। रोहन बता रहा था। वह बोला दादी जो यह बड़े-बड़े दुकानदार तथा मॉल में सेल लगी होती है जहाँ एक के साथ एक फ्री वाले ऑफर होते है, काफ़ी चालकी भरा तरीका है अपना सामान बेचने का। ऐसी सेल में एक्सपायरी डेट (समाप्ति तिथि) देखना कभी नहीं भूलना चाहिए। जब रोहन यह बता रहा था गरिमा चिप्स का पॉकेट ले आई। उसने लेबल को ध्यान से पढ़ा। गरिमा यह सब जानकारी देना कंपनियों के लिए अनिवार्य है और किसी भी दुकान पर expired चीज़े नहीं बेची जा सकती, यह कानूनी अपराध है। रोहन को काफी जानकारी थी। यह सब पुस्तकालय में पढ़ी हुई किताबों से प्राप्त जानकारी थी। आरती और सुरेश जब घर पहुँचे तो कुछ देर आराम करने के बाद दादी ने उन्हें आज के रोमांचक दिन के बारे में बताया। दादी दिन प्रतिदिन गिरते मानवीय मूल्यों का बार-बार ज़िक्र कर रही थी। सभी दादी के बात से सेहमत थे। आरती गंभीर स्वर में बोली- ''हाँ माँ, आप सच कह रही है। आज इंसान में इतनी नैतिक गिरावट आ गई है कि थोड़े से लाभ के लिए वह दूसरों के जीवन को दाव पर लगा देता है। सुरेश बोला, ''बच्चों ने अच्छा काम किया है। हमें ऐसी जानकरी समाज में फैलानी चाहिए। इस तरह के आसान प्रयोगों से हम कुछ हद तक मिलावट से बच सकते है। बच्चों की मेहनत से बनी छोटी-सी किट तथा रिर्पोट देख मम्मी-पापा ने आज उनके मनपसंद रेस्टोरेंट में जाना तय किया। सभी तैयार हो गए, रेस्टोरेन्ट में पहुँच अपनी - अपनी पसंद की डिश ऑडर कर वह फिर मिलावट पर चर्चा करने लगे।

मम्मी ने पूछा- गरिमा, तुम्हारे संतुलित आहार वाले प्रोजेक्ट में तुमने आयोडिन पर क्या लिखा था? गरिमा ने बताया कि आयोडिन काफी महत्वपूर्ण है, इसकी कमी से घेंगा हो सकता है तथा मानसिक संतुलन बिगड़ सकता है। माँ यह आयोडिन हमें आयोडाइस्ड नमक से मिलता है। आरती ने गरिमा की बात का समर्थन किया और कहा कि आयोडाइस्ड नमक के स्थान पर साधारण नमक देना भी धोखा है। अगर तुम्हें यह पता लगाना हो कि नमक में आयोडिन है या नहीं तो क्या करोगे? रोहन बोला-मम्मी मैंने किताब में पढ़ा था। कुछ देर सोचने के बाद वह बोला, 'हाँ याद आया, एक आलू को काटकर उसपर नमक लगाए। दो मिनट बाद इसपर नींबू का रस डाले। अगर नीला या गाढ़ा नीला रंग दिखे तो नमक में आयोडिन है, अन्यथा नहीं।' सुरेश ने कहा कि उसे यह तरीका आज ही पता चला है। वह रोहन की पीठ थपथपाने लगा। गरिमा अपना खाना खाने में व्यस्त थी। उसने बस इतना कहा कि रोहन के साथ मिल उसने बहुत से मिलावटी पदार्थों के बारे में पढ़ा है पर काफी प्रयोग HCl अम्ल से ही किए जा सकते है। उसने बताया कि कुछ खाने की चीज़ों में धुलाई का सोडा मिला होता है जो HCl के साथ बुलबुले बनाता है।

(पुस्तक अंश)

11 अप्रैल 1978 को जन्मी पुनीता मल्होत्रा एम.फिल, एम.एस-सी (रसायन शास्त्र) एम.एड. तक शिक्षित हैं। 'केमेस्ट्री व्हिाइंड मिरेकल्स' आपकी प्रकाशित कृति है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार द्वारा आपको विश्वविद्यालय पदक से विभूषित किया गया। आप एकेडमिक कोआर्डिनेटर, के.आर. मंगलम वर्ल्ड स्कूल, गुडगांव रिसोर्स परसन, इंस्पायर मेंबरशिप प्रोग्राम, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग यूनेस्को की एनवायरनमेंट ऑफ साइंस रिसोर्स मटीरियल नामक राष्ट्रीय परियोजना की कोर कमीटी की सदस्य हैं। उक्त पुस्तक में रसोई के बदलते स्वरूप में प्राचीन काल से वर्तमान तक अनेक परिवर्तन आए हैं। लेखिका का मानना है कि ग्रहणियां किसी वैज्ञानिक से कम नहीं जो रसाई में नित नए प्रयोग करती है। यह पुस्तक हमें रसोई के उपकरणों के बदलते रूप और इसके पीछे के विज्ञान की जानकारी देती है। रसोई की प्रतिदिन की प्रक्रियाओं के माध्यम से रुचि पैदा करना इस पुस्तक का उद्देश्य है।

बच्चों के लिये विज्ञान माडल

बृजेश दीक्षित

पत्थर के दबाने से विद्युत उत्पन्न करें :

किंचिन टाप पर प्रयोग होने वाले हरे पत्थर का टुकड़ा लें। इस टुकड़े के दोनों ओर एल्यूमीनियम फॉइल रखकर लकड़ी के गुटकों से दबायें। मल्टीमीटर द्वारा विद्युत आवेश नापें। इस आवेश को पीजो प्रभाव कहते हैं।

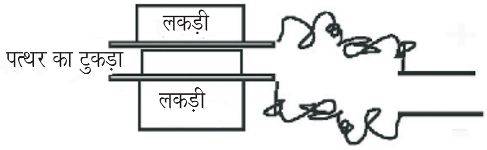

पेन्सिल में विद्युतधारा बहती है:

पेन्सिल के दोनों छोरों की लकड़ी को छीलकर हटा दें। अब इस पेन्सिल को किसी डी.सी. परिपथ में श्रेणी क्रम में जोड़ते हैं। विद्युतधारा पेंसिल में से गुजरकर परिपथ को पूर्ण कर देती है क्योंकि ग्रेफाइट कार्बन का अपर रूप होता है। यहां कार्बन धातु के विद्युत सुचालक गुण का प्रदर्शन करता है और आवेश प्रवाहित होता रहता है इसका उपयोग कर एल.ई.डी. बल्ब जला सकते हैं।

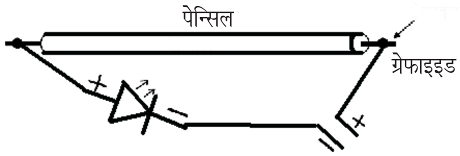

मोबाइल की घण्टी बन्द :

मोबाइल को एक ऐसे स्टील के टिफिन बाक्स के अन्दर बन्द करते हैं जिसका ढक्कन कस कर बन्द हो जाता हो। अब दूसरे मोबाइल से उसका नम्बर डायल करते हैं। वह उस नम्बर को पहुंच क्षेत्र के बाहर बतायेगा। क्योंकि डायल किये जाने वाले मोबाइल से भेजी जा रही विद्युत चुम्बकीय तरंगों की भेदन क्षमता कम होने के कारण स्टील की परत को भेदकर टिफिन के अन्दर वाले मोबाइल से नहीं जुड़ पा रही है।

(पुस्तक अंश)

15 जुलाई 1958 भरथना इटावा में जन्में बृजेश दीक्षित एम.एस-सी (जन्तु विज्ञान) तथा बी.एड. तक शिक्षित हैं। आप श्रीनारायण इंटर कॉलेज बडेरा औरैया उत्तर प्रदेश में प्राध्यापक हैं। हाईड्रो कंट्रोल बेरियर (भारतीय रेल द्वारा स्वीकार), मल्टीफंक्शनल कम्पस और ई.एवं डी. उपकरण आपके नाम दर्ज हैं। सर्वोच्च शिक्षक पुरस्कार, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद सम्मान से आपको विभूषित किया गया। आपने कई विज्ञान प्रदर्शनियां की तथा प्रतिस्पर्धाओं में विजयेता रहे। आप एनडब्ल्यूआईपीटी, आईआईटी कानपुर, भारतीय भौतिक परिषद के स्थाई सदस्य हैं। प्रस्तुत पुस्तक एक प्रयोगधर्मी विज्ञान पुस्तक है। सीखने की सर्वश्रोष्ठ विधि है कि कार्य को स्वयं करना। बांस एवं फूल झाड़ू से निर्मित मॉडलों से विज्ञान के आधार भूत सिद्धान्तों को समझाने का प्रयास इस पुस्तक में किया गया है। सीमित संसाधनों से अध्ययन करने वाले सुदूर ग्रामीण अंचल के छात्रों के लिए यह पुस्तक विशेष रूप से उपयोगी होगी।

अनुसृजन योजना के अंतर्गत प्रकाशित पुस्तकें

क्र	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य रुपये
प्रथम चरण			
1.	खनिज और मानव	डॉ. विजय कुमार उपाध्याय	100/-
2.	भारत का अंतरिक्ष कार्यक्रम	कालीशंकर एवं राकेश शुक्ला	100/-
3.	जल संरक्षण	डॉ. डी. डी. ओझा	100/-
4.	भूमि संरक्षण	डॉ. दिनेश मणि	80/-
5.	पर्यावरणः दशा एवं दिशा	अरुण कुमार पाठक	100/-
6.	वैकल्पिक ऊर्जा के स्रोत	संगीता चतुर्वेदी	60/-
7.	प्राचीन भारत में वैज्ञानिक चिंतन	डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती	60/-
8.	इलेक्ट्रॉनिक आधारित सामरिक सुरक्षा तकनीक	डॉ. मनमोहन बाला	60/-
9.	जैव विविधता संरक्षण	मनीष मोहन गोरे	50/-
10.	दूर संचार	संतोष शुक्ला	80/-
11.	घर-घर में विज्ञान	डॉ. के. एम. जैन	80/-
12.	भौतिकी की विकास यात्रा	डॉ. के. एम. जैन	90/-
13.	नेनोटेक्नॉलॉजी	डॉ. पी. के. मुखर्जी	80/-
द्वितीय चरण			
14.	हमारे जीवन में अंतरिक्ष	कालीशंकर एवं राकेश शुक्ला	150/-
15.	वैश्विक तापन	डॉ. दिनेश मणि	100/-
16.	ई-वेस्ट प्रबंधन	संतोष शुक्ला	100/-
17.	लेजर लाईट	डॉ. पी. के. मुखर्जी	100/-
18.	न्यूक्लियर एनर्जी	अनुज सिन्हा	100/-
19.	न्यूट्रिनों की दुनिया	डॉ. के. एम. जैन	100/-
तृतीय चरण			
20.	भोजवैटलैंडः भोपाल ताल	राजेन्द्र शर्मा 'अक्षर'	150/-
21.	महासागर बोलते हैं	बजरंगलाल जेठू	250/-
22.	महासागरः जीवन के आधार	नवनीत कुमार गुप्ता	200/-
23.	ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति	महेन्द्र कुमार माथुर	200/-
24.	सूक्ष्म जीव विज्ञान	डॉ. पंकज श्रीवास्तव एवं श्रीमती तोषी जैन	200/-

25.	भारत में विज्ञान एवं विज्ञान संचार की परंपरा	विश्वमोहन तिवारी	200/-
26.	सेहत और हम	मनीष मोहन गोरे	200/-
27.	रसोई विज्ञान	पुनीता मल्होत्रा	100/-
28.	ह्यूमन ट्रांसमिशन एवं अन्य विज्ञान कथाएं	डॉ. ज़ाकिर अली रजनीश	150/-
29.	बायोइंफार्मेटिक्स	डॉ. अर्चना पांडेय	150/-
30.	हमारे प्रेरणा स्रोत भारतीय वैज्ञानिक	राम शरण दास	200/-
31.	मध्यप्रदेश की विज्ञान संचार यात्रा	चक्रेश जैन	100/-
32.	हिन्दी विज्ञान लेखनः भूत, वर्तमान एवं भविष्य	डॉ. शिव गोपाल मिश्र	200/-
33.	दैनिक जीवन में रसायन	डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती	200/-
34.	जलवायु परिवर्तन	डॉ. दिनेश मणि	150/-
35.	ग्रीन बेबी	विजय चितौरी	200/-
36.	फोरेन्सिक साइंस	डॉ. पंकज श्रीवास्तव	150/-
37.	सर्वशास्त्र शिरोमणि गणित	डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मिश्र	200/-
38.	ऊतक संवर्धन	प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव	200/-
39.	आइए लिनक्स सीखें	रविशंकर श्रीवास्तव	250/-
40.	हम क्या समझते हैं?	प्रदीप श्रीवास्तव	100/-
41.	सौन्दर्य प्रसाधनों का रसायन विज्ञान	डॉ. बबिता अग्रवाल	200/-
42.	प्रदूषण जनित रोग	डॉ. सुनंदा दास	200/-
43.	भोपाल के पक्षी	डॉ. स्वाति तिवारी	400/-
44.	पर्यावरण और मानव जीवन	डॉ. सुमन गुप्ता	200/-
45.	बच्चों के लिए विज्ञान मॉडल	बृजेश दीक्षित	100/-

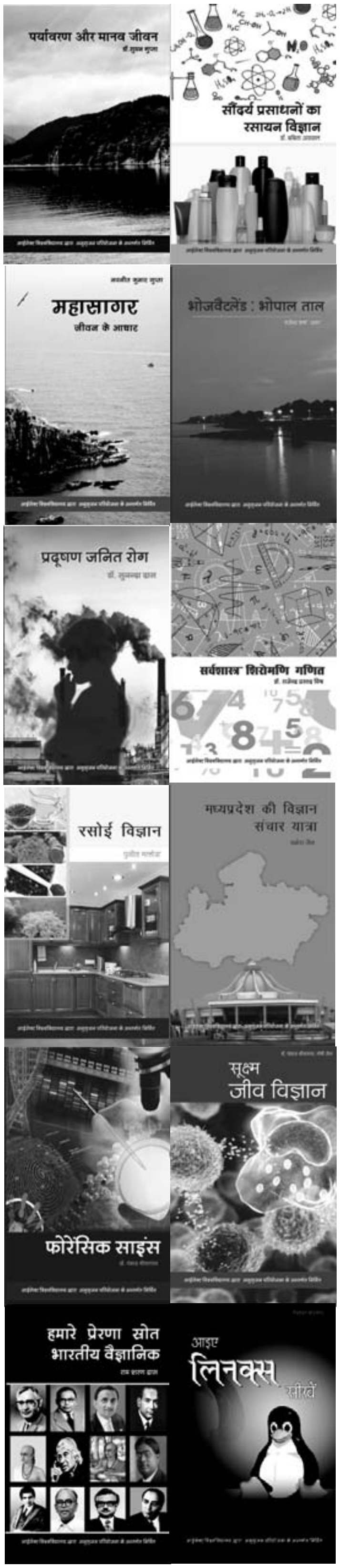

पुस्तक प्राप्ति के लिए 'आईसेक्ट विश्वविद्यालय' को भुगतान के दो विकल्प :
स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, शाखाः महावीर नगर, भोपाल ब्रांच कोड : 3867,
IFSC:SBIN0003867, MICR 462002015, Account No. 32425578992

अथवा

बैंक ड्राफ्ट : 'आईसेक्ट विश्वविद्यालय' को भोपाल में देय। ड्राफ्ट इस पते पर भेजें:
निदेशक, आईसेक्ट विश्वविद्यालय, बंगरसिया चौराहे के पास,
चिकलोद मार्ग, जिला रायसेन – 464993

डाक खर्चः पांच पुस्तक तक की खरीदी पर पुस्तकों के मूल्य में डाक खर्च रु. 50/- जोड़ें। पांच से अधिक पुस्तकों की खरीदी पर डाक खर्च नहीं लगेगा।

महत्वपूर्ण : खरीदी जाने वाली पुस्तकों की सूची एवं भुगतान का विवरण निम्नलिखित ई-मेल पर भेजें : cscau@aisectuniversity.ac.in